चन्दामामा
दिसम्बर १९७८
75

DADDY
MUMMY
AND...
I
" ये सब मैंने अपने एको स्केच पेनसे बनाये हैं। "
EKCO
स्केच पेन
रंग ही रंग . . . जिनसे बच्चों को प्यार है. वे चाहते हैं—नित नये चित्र बनाना.
अपने बच्चों की सुप्त कला को प्रोत्साहन दीजिए . . . उन्हें एको स्केच पेन का आकर्षक सेट उपहारस्वरूप दीजिए.
ये कई मनपसंद रंगों में मिलते हैं.
EKCO
SKETCH PEN
FOR SKETCHING COLOURING • SIGNING
वितरक :
किरण एण्ड कंपनी,
७३/८, शामसेट स्ट्रीट, बम्बई ४०० ००२
फोन : ३२४४३२
एको स्केच पेन से लिखने का मज़ा ही कुछ और है.
ADVERTS/WP/216/HIN/38

काटिए और रखिए

बोर्नविटा

आविष्कारों की अजब कहानी-४

रेकॉर्ड प्लेयर का कमाल

आविष्कारक : टामस अल्वा एडिसन
१८४७ – १९३१ यूएसए

सिद्धांत : स्वर की लहरें कम्पन पैदा करती है जो तवे पर रेकॉर्ड की जा सकती है और बाद में जब इस तवे को या रेकार्डप्लेयर पर बजाया जाएगा तो असली स्वर फिर से उत्पन्न किया जा सकता है.

साल : १८७७ (सबसे पहली रेकार्डिंग एक वैक्स सिलिंडर पर की गई थी, जिसे एक हार्न के जरिए बजा कर सुना गया था).

रेकॉर्ड प्लेयर काम कैसे करता है ?

रेकॉर्ड बनाने के लिए स्वर को माइक्रोफोन के जरिए बिजली की लहरों में बदल कर बारीक घुमावदार लकीरों की शकल में एक तवे पर रेकार्ड कर लिया जाता है, ये लकीरें तवे की सतह पर खिंचती चली जाती हैं और उनकी गहराई लहरों की तेजी के मुताबिक बदलती रहती है. इस प्रकार स्वर रेकार्ड होता है. रेकॉर्डप्लेयर के, जो रेकार्ड से स्वर को फिर उत्पन्न करता है, दो मुख्य भाग होते है :
१. टर्न टेबल २. टोन आर्म

रेकार्ड टर्न टेबलपर रखकर एक जैसी निश्चित गति से घुमाया जाता है (मिनट में ३३ १/३, ४५ या ७८ बार). टोन आर्म एक तरफ लगा हुआ रहता है और इसके दूसरे आजाद घूमनेवाले सिरे में एक सुई लगी होती है जो रेकार्ड बजाते वक्त रेकॉर्ड पर होती है.

जैसे जैसे रेकार्ड घूमता है, रेकार्ड की लकीरें सुई के नीचे से गुजरती हैं और सुई इन लकीरों की गहराई को नन्हीं कंपनों की शकल में 'महसूस' करती है. सुई की इन कंपनों को टोन आर्म में बिजली की लहरों में बदल दिया जाता है जो ऐम्प्लीफायर के द्वारा काफी मजबूत होकर स्पीकर को पहुंचाई जाती हैं ताकि असली स्वर फिर से उत्पन्न हो जाय.

काटिए और रखिए

कैडबरिज
बोर्नविटा
आपको ज़्यादा शक्ति देता है...आपको आगे रखता है.

OBM/2039 HIN

विशेष भेंट -४

एक नामी वितरक के विशेष सहयोग से हमने ४८ पृष्ठों की रंगीन, सचित्र, यू.के. में छपी पुस्तक 'The How and Why Wonder Book of Robots and Electronic Brains' (अंग्रेजी में) रु. ४.५० डाकखर्च मुफ़्त (असली दाम : ३५ पेन्स) के किफ़ायती दर पर आपको विशेष भेंट की तरह दिलाने का इंतजाम किया है. अपनी पुस्तक पाने के लिए मनीआर्डर से रु.४.५० और डाक से किसी बोर्नविटा पैक का फायल या ऊपरी फ़्लैप इस पते पर भेजिए : Department 2C India Book House, 22 Bhulabhai Desai Road, Bombay 400 026. जल्दी कीजिए ! पुस्तकें कम हैं.

चन्दामामा

दिसम्बर १९७८

★

विषय-सूची

★

एक प्रति : १-२५

वार्षिक चन्दा : १५-००

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

आगामी वर्ष १९७९ बाल वर्ष के रूप में सारे विश्व में मनाया जानेवाला है। भारत के तीस करोड़ बच्चों की तरफ़ से "चन्दामामा" बाल वर्ष का स्वागत कर रहा है। आगामी वर्ष प्रत्येक महीने "पुराणों की बाल कथाएँ" प्रकाशित करनेवाला है।

अक्तूबर मास की कहानी-शीर्षक प्रतियोगिता का परिणाम

"इन्सान के दो रूप"

प्रेषक : **नरेश श्रीहरि टोंगे,** नेहरू चौक वहोरा, जि. चन्द्रपूर (महा.)

अमर वाणी

अनुकूलां, विमलांगी, कुलजां, कुशलां, सुशील संपन्नां
पंचलकारां भार्यां पुरुषः, पुण्योदया ल्लभते ॥

[अनुकूलवती, रूपवती, उत्तम वंश में उत्पन्न युवती, चतुरा और उत्तम स्वभाववाली पत्नी पुरुष को पुण्य के कारण ही प्राप्त होती है ।]

वर्ष : ३१ दिसंबर १९७८ **अंक : ४**

एक प्रति : १-२५ :: **वार्षिक चन्दा : १५-००**

श्रीहरि, दामले, भंडिहोळे (कर्नाटक)

प्रश्न : धन नामक वस्तु कैसे उत्पन्न हुई?

उत्तर : जंगली अवस्था में मानव के लिए आवश्यक संपत्ति याने खाना और कपड़ा प्रकृति में से ही प्राप्त होती थी। मानव आहार का संचय करता था या शिकार खेलता था। उस दशा में मृगचर्म उसके वस्त्रों के रूप में और घर के अच्छादन के काम में आते थे। लेकिन धीरे-धीरे मनुष्य अपने लिए आवश्यक संपत्ति का स्वयं उत्पादन करने लगा। खेतीबाड़ी और मवेशीपालन की वृद्धि के साथ एक मनुष्य के श्रम के द्वारा दस आदमियों के लिए आहार का उत्पादन संभव हुआ। याने मानव अपनी आवश्यकता से अधिक अन्न का उत्पादन करने की स्थिति में पहुँचा। इस प्रकार समाज के अनेक व्यक्ति अन्न के उत्पादन के काम से हटकर कुम्हारगिरी, बढ़ईगिरी, लुहारगिरी, शिल्प, आभूषण वगैरह कई काम सीखकर संपत्ति को अनेक तरह से बढ़ाने के काम में जुट गये। यह परिणाम समष्टि रूप से समाजों में आया। याने अनेक समाज अपनी जरूरतों से बढ़कर उत्पादन करने लगे। सभी समाज एक ही प्रकार की संपत्ति की सृष्टि नहीं करते, इसलिए विनिमय द्वारा सभ्यता एक समाज से दूसरे समाज में फैलकर उसके प्रभाव का विस्तार हो पाया।

लेकिन केवल संपत्ति का विनिमय करने पर उसका प्रयोग सीमित ही रहता है। इससे अधिक लाभ व्यापार के द्वारा होता है। उदाहरण के लिए हम यह मान ले कि एक किसान के यहाँ थोड़ा सा अनाज और एक कुम्हार के यहाँ थोड़े से बर्तन-भांड़े बच गये हैं। निकट के प्रदेश में उनकी माँग नहीं होती। मगर व्यापारी दस लोगों के पास बचे अनाज का संग्रह करके भारी मात्रा में उसकी माँगवाले प्रदेश में ले जाकर बेच सकता है। क्रय और विक्रय के चालू होवे पर विभिन्न वस्तुओं का मूल्य निर्द्धारण करनेवाला कोई प्रमाण होना चाहिए, वही धन है। (धातु के सिक्कों के प्रचलन के पूर्व धन प्राकृत दशा में कोड़ी वगैरह के रूप में विनिमय के माध्यम थे) तांबा, चांदी और सोने से निर्मित यह धन छोट से अंशों के रूप में भी बचाकर रखा जा सकता है। महीने में एक चांदी के सिक्के की संपत्तिवाला भी सौ महीनों में धन जोड़कर सौ चांदी के सिक्कों के मूल्य की वस्तु ख़रीद सकता है। इसलिए यह कहना अतिशक्ति न होगी कि धन न होता तो हम जिसे सभ्यता कहते हैं, उसकी संभावना न होती।

लब्ध प्रणाशं

[६५]

सियार की बातें सुन लंबकर्ण के मन में तीव्र इच्छा पैदा हुई और वह सियार के पीछे जाने को लालायित हो उठा। सियार उसे सिंह के पास ले गया। गधे को बड़े इतमीनान से आते देख सिंह जो बड़ा उद्विग्न था, उसे मारने के लिए कूद पड़ा। सिंह ने जोर से छलांग मारा था, इस वजह से वह गधे को पार कर दूर जा गिरा। वह पहले ही घायल था, छलांग मारने की थकावट के कारण वह थोड़ी देर तक हिल डुल न पाया।

गधे की समझ में न आया कि सिंह के इस छलांग मारने का क्या मतलब है? उसके निकट बिजली के गिरने की सी आवाज़ पाकर गधा घबराकर भाग खड़ा हुआ। उसने भागते-भागते मुड़कर देखा। उसे एक विचित्र जानवर दिखाई दिया। उसकी आकृति भयंकर थी, जबड़े क्रूर थे और आँखें लाल थीं। गधे अपने गाँव की ओर भाग गया। इस पर सिंह से सियार बोला–"मृगराज, यह क्या हो गया? आप के प्रताप और कुशलता को मैंने आज खुद अपनी आँखों से देखा।"

"मेरे महा मंत्री! आज में छलांग मारने को पूर्ण रूप से तैयार न था। अगर मैं सचमुच तैयार होता तो क्या हाथी भी मेरी पकड़ से बच सकता है?"

"तब तो आप अभी से तैयार रहिये। मैं फिर से उसे बुला लाता हूँ।" सियार ने समझाया।

"दोस्त! उसने मुझे खुद देख लिया है। फिर से बुलाने पर वह थोड़े ही आयेगा? किसी दूसरे जानवर को ले आओ।" सिंह ने कहा।

"आप इसकी फिक्र क्यों करते हैं? मैं सारी बातें देख लूंगा।" यों समझाकर सियार चला गया। उसने देखा, गधा एक तालाब की मेंड पर घास चर रहा है।

सियार को देख गधा बोला–"देखो दामाद! तुम मुझे उस सुंदर प्रदेश में ज़रूर ले गये, मगर मैं मरते-मरते बाल-बाल बच गया।"

सियार जोर से हंस पड़ा और बोला–"मामाजी, मैंने जिन मादा गधों की बात कही थी, उनमें से वह एक थी। वह अच्छी तरह से सज-धजकर तुम्हारा ही आलिंगन करने को अपने हाथ बढ़ाकर तुम पर कूद पड़ी, पर बद क़िस्मती से तुम्हें पार कर दूर जा गिरी। तुम भाग गये। इसलिए फिर मेरे साथ चलो, वह तुम्हारे वास्ते खाना-पीना छोड़ कर यह निर्णय कर बैठी है कि अगर लंबकर्ण उसका पति नहीं बना तो वह पानी या आग में कूदकर जान दे देगी, अथवा ज़हर खा लेगी। तुम अकारण एक औरत के प्राण क्यों ले लेते हो? यह तो महान पाप है। जो लोग औरत का तिरस्कार करके कामदेव के क्रोध का शिकार बन जाते हैं, वे बैरागी बन जाते हैं, उनकी जटाएँ बढ़ जाती हैं, वे गेरुए वस्त्र धारण कर कपाल हाथ में लिये भटकते रहते हैं।"

सियार की इन बातों पर यक़ीन करके मूर्ख गधा उसके पीछे चला आया। प्रारब्ध अगर पीछा करता है तो विवेकी भी अपना विवेक खो बैठता है। गधे के समीप आते ही सिंह ने उस पर हमला करके उसे मार डाला। इसके बाद सियार को गधे की लाश को पहरा देने को नियुक्त कर समीप की नदी में वह स्नान करने चला गया।

सियार भूख से परेशान था। उसके मन में गधे का कलेजा और उसके कान खाने की बड़ी इच्छा जगी। वह अपनी इच्छा को दबा न पाया, उसने खा डाला।

सिंह स्नान करके लौट आया। गधे के कान और कलेजे को न पाकर वह क्रोध में आया। उसने गरजकर कहा–"अरे दुष्ट! तुमने यह अनर्थ क्यों कर डाला? तुम कान और कलेजा खाकर मुझे झूठा माँस छोड़ बैठते हो?"

सियार विनयपूर्ण शब्दों में बोला– "प्रभू! आप कृपया ऐसा न कहिए! मैं निर्दोष हूँ। इन जानवरों के तो कान और कलेजे कभी होते ही नहीं, वरना एक बार आप को देख कहीं फिर लौटकर आप के पास आ जाता? उसके कान नहीं थे, इसी वजह से आप के छलांग मारने की आहट उसे सुनाई नहीं दी। उसके कलेजा न था, इस कारण आप की भयंकर आकृति देखकर भी वह डरा नहीं है। जिसका कलेजा नहीं होता, उसे कलेजे की धड़कन भी नहीं होती जो डर के कारण पैदा होती है। उसके यहाँ आने और भागने के पीछे कोई विशेष कारण नहीं है। इसलिए मैं फिर एक बार उसे यहाँ ला सका हूँ।"

सिंह ने सियार की बातों पर यक़ीन किया। सियार ने भी सिंह के साथ गधे का माँस खाया।

बन्दर ने मगर मच्छ को गधे की कहानी सुनाकर कहा–"मूर्ख! तुमने मुझे धोखा

तो ज़रूर दिया है, लेकिन युधिष्ठर नामक कुम्हार जैसे तुमने भी जोश में आकर सच बात कह डाली। अपने मायाजाल के सफल होने की ख़ुशी में सच बतानेवाला मूर्ख भी युधिष्ठिर जैसे तकलीफ़ों का शिकार हो जाता है।"

"वह कैसी कहानी है?" मगर मच्छ के पूछने पर बन्दर ने यों सुनाया :

कुम्हार वीर की कहानी

एक दिन कुम्हार हद से ज़्यादा दारू पीकर अपने आंगन में अंधा धुंध दौड़ते नीचे गिर गया, तब मिट्टी के बर्तन का एक टीकरा उसके भाल पर चुभ गया, जिससे घाव होने के कारण ज़्यादा ख़ून

बह गया। उसका सही इलाज़ वक़्त पर न हो पाया, फलतः उसमें से पीब निकला और घाव के भरने में काफी वक़्त लगा। घाव के भरने के बाद भी उसका दाग बना रहा।

इसके थोड़े दिन बाद कुम्हार के प्रदेश में भयंकर अकाल पड़ा। इस कारण कुम्हार अपने गाँव को छोड़ दूर प्रदेश के किसी राजा के दरबार में नौकरी की खोज में चल पड़ा।

राजा ने कुम्हार के भाल पर भयंकर दाग देख सोचा—"यह कोई महान वीर होगा। युद्ध में वीरोचित साहस दिखाते हुए यह दुश्मन के हाथ घायल हुआ होगा। यह दाग उसी घाव का होगा। इसे देखने से ऐसा मालूम होता है कि लड़ाई के मैदान में यह पीठ दिखानेवाला नहीं है। यह मेरे दरबार में रहने के क़ाबिल है।"

यों विचार कर राजा ने कुम्हार को अपनी सेना में अच्छे ओहदे पर नियुक्त किया और कई पुरस्कार देकर उसका सम्मान किया।

राजा ने कुम्हार के प्रति जो विशेष आदर दिखाया, यह राजपूत योद्धाओं को अच्छा न लगा। वे कुम्हार से ईर्ष्या ज़रूर करने लगे, पर प्रकट रूप में कुछ नहीं बोले। इसके दो कारण थे—एक तो कुछ कहने पर राजा शायद नाराज़ हो जायेंगे और दूसरी बात—न जाने यह कोई बड़ा राजपूत योद्धा ही हो!

कुम्हार को अपने दरबार में नियुक्त करने के थोड़े दिन बाद राजा को अपने शत्रु राजा के साथ युद्ध करना पड़ा। हाथी और घोड़ों को तैयार करके युद्ध क्षेत्र में भेजने के लिए राजा ने योद्धाओं का चुनाव किया। उस संदर्भ में राजा ने अपने सैनिक वीरों का पर्यवेक्षण करते कुम्हार को देखा और पूछा—"हे राजपूत वीर! तुम्हारा नाम क्या है? तुम्हारा वंश क्या है? तुम्हारे भाल पर वह भयंकर दाग किस युद्ध में हो गया है?"
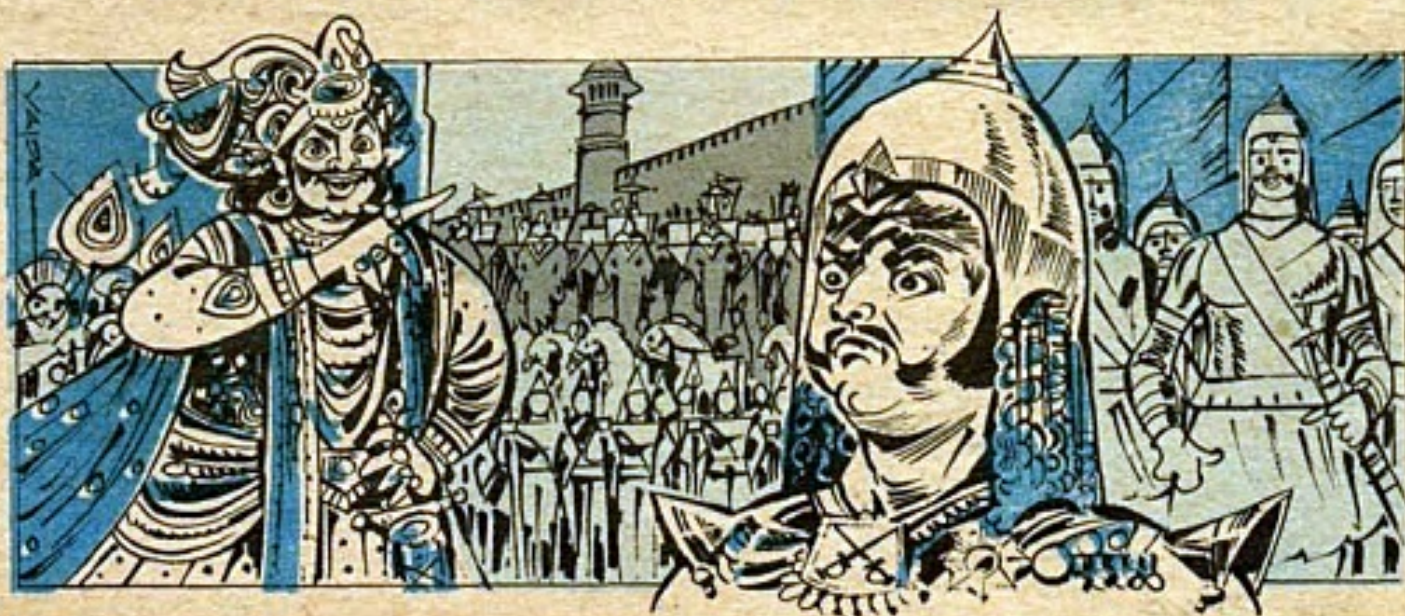
भल्लूक मांत्रिक

[५]

[राजा जितकेतु को दण्ड देने भल्लूक मांत्रिक कालीवर्मा तथा अन्य लोगों को साथ ले नगर की ओर जा रहा था, तब राजा दुर्मुख के सैनिकों ने उसे रोका। मांत्रिक ने दुर्मुख के समीप जाकर बधिक को अपने मंत्र-दण्ड का स्पर्श कराया। इस पर वह भल्लूक की आकृति में परसु घुमाते दुर्मुख की ओर कूद पड़ा। बाद...]

बधिक जब अचानक भल्लूक के रूप में बदलकर चमकनेवाला परसु हाथ में ले राजा दुर्मुख पर हमला कर बैठा, तब दुर्मुख पल भर के लिए चकित रह गया। उस समय राजा के बचाव के लिए उसके अंग रक्षक आगे आये। उन्हें लात मारकर बधिक ने नीचे गिराया, तब वह बड़ी तेजी के साथ दुर्मुख के आसन की ओर कूद पड़ा।

तब तक दुर्मुख संभलकर चिल्ला उठा— "सुनो! हमारे सैनिक कहाँ? अंग रक्षक क्या हो गये? इस भालू को रोककर तलवार के घाट उतार दो।" यों आदेश देते दुर्मुख अपने आसन से उतर पड़ा। थोड़ी दूर तक दौड़कर अपने घोड़े पर उछलकर सवार हो गया। उसके साथ एक अंग रक्षक भी दौड़कर एक दूसरे घोड़े पर छलांग मारकर सवार हो गया।

राजा दुर्मुख और उसके अंग रक्षक को घोड़ों पर सवार होकर भागते देख कालीवर्मा हताश होकर भल्लूक मांत्रिक से बोला– "गुरु! इधर आस-पास में शासकों के रूप में माने जानेवाले दो दुष्टों में से एक तो हमारे हाथ में आ गया और दूसरा बचकर भाग गया। मुझे इस बात की जरा भी उम्मीद नहीं है कि उसका पीछा करके हमारा बधिक भल्लूक उसे पकड़ पाएगा।"

भल्लूक मांत्रिक ने दुर्मुख के घोड़े के पीछे दौड़नेवाले बधिक भालू की ओर अपनी दृष्टि दौड़ाई, तृप्तिपूर्वक सर हिला करके बोला–"कालीवर्मा! दुर्मुख अगर हमारे बधिक के परसु का शिकार न बना तो तब हम और तुम इसका फ़ैसला करेंगे।" फिर वहाँ पर जान के डर से कांपनेवाले दुर्मुख के मंत्री और सलाहकारों की ओर भल्लूक मांत्रिक ने आँखें लाल करके देखा और पूछा–"अबे, यह बताओ कि तुम लोग चन्द्रशिला नगर पर हमला करने निकल पड़े हो न? लेकिन तुम्हारी सेना कहाँ पर है?"

इस सवाल का जवाब दुर्मुख के सलाहकारों में से एक ने भर्राये स्वर में यों दिया–"आप तो महा मांत्रिक हैं। अब तक हमारी सेना का पता आप को

अंग रक्षक ने दुर्मुख से कहा–"महाराज, फिलहाल हमें यहाँ से भाग जाना ही सब प्रकार से हितकर होगा। हमारे सैनिक कहीं नदी के तट पर खेमों में आराम कर रहे हैं। यह खबर पाकर उनके यहाँ आने के पहले ही यह मांत्रिक अपने भालू की मदद से हम सब का वध करा सकता है।"

अंग रक्षक यों समझा रहा था, तभी राजा दुर्मुख ने उनके पीछे दौड़े आनेवाले बधिक भालू को देख घोड़े को ललकारा। घोड़ा भी भालू को देख भड़क उठा और लगाम की डोरों को झटकाते तेजी के साथ भाग गया।

लग गया होगा! फिर भी आप पूछ रहे हैं, इसलिए बता देता हूँ। हमारे सैनिक सक नदी के किनारे खेमों में रहकर आगामी लड़ाई में दुश्मन का संहार करने के लिए अपने हथियारों को पैनी बना रहे हैं।"

यह जवाब सुनकर भल्लूक मांत्रिक ठहाके मारकर हँस पड़ा। पास ही रहकर विस्मय के साथ इस दृश्य को देखनेवाले मंत्री जीवगुप्त से पूछा—"अजी, चन्द्रशिला नगर के मंत्री! तुमने क्या दुर्मुख के सलाहकार की बातें सुनीं?"

"महाशय! सारी बातें सुनीं! मुझे इन सारे दृश्यों को देखने पर ऐसा लगता है कि मैं पागल हो जाऊँगा।" मंत्री जीवगुप्त ने उत्तर दिया।

"ओह, ऐसी बात है? मेरे और कालीवर्मा को भी इस प्रदेश को छोड़ हिमालय की चोटियों पर से उस पार जाने के पहले हम कुछ और लोगों का घमण्ड चूर करके उन्हें भी इसी तरह पागल बनाना चाहते हैं, क्यों महा मंत्री, मेरा विचार ठीक है न?" भल्लूक मांत्रिक ने अपने मंत्र दण्ड को जमीन पर पटकाते हुए कहा।

"यह सब आप की कृपा है।" मंत्री जीवगुप्त ने सर झुकाते हुए उत्तर दिया।
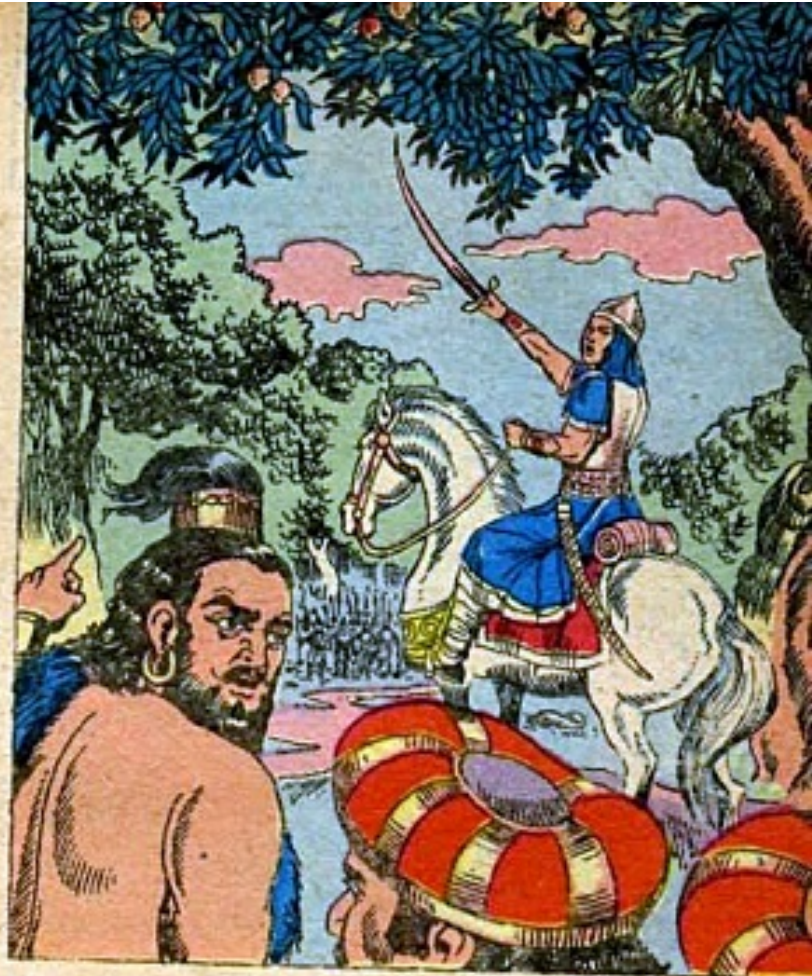
भल्लूक मांत्रिक कुछ कहने को ही था, तभी कालीवर्मा आम के पेड़ों की ओर दृष्टि दौड़ाते हुए बोला—"गुरु! बहुत से सैनिक तलवार और भाले लिये हमारी ही तरफ़ बढ़े चले आ रहे हैं।" इन शब्दों के साथ म्यान में से तलवार निकाली और अपने साथ रहनेवाले राजा जितकेतु के सैनिकों को सावधान किया।

राजा दुर्मुख के सलाहकार अब तक भयभीत नज़र आ रहे थे, भल्लूक मांत्रिक ने उनसे कहा—"अबे सुनो, तुम में से एक आदमी आगे जाकर उन सैनिकों को यहाँ पर लानेवाले दलपति को समझाओ कि तुम्हारे राजा की यहाँ पर क्या हालत हो

गई है? अगर मूर्खतावश उसने मुझ पर तथा मेरे अनुचरों पर भी हमला करने की कोशिश की तो तुम लोगों को बाघों के रूप में और उन्हें हिरणों के रूप में बदलकर उन्हें तुम लोगों का आहार बनाने जा रहा हूँ।"

"महा मांत्रिक इसके सर्वथा योग्य हैं। सुनो, भाइयो, तुम्हारी आँखों के सामने ही इन्होंने बधिक को भयंकर भालू के रूप में बदल डाला है न?" जीवगुप्त ने सलाहकारों को समझाया।

राजा दुर्मुख के मंत्री और सलाहकारों ने परस्पर एक दूसरे के चेहरे देख लिये। उनमें से एक वहाँ से हिला और अपनी ओर बढ़नेवाले सैनिकों के दलपति से मिलकर समझाया-"हमारे राजा के प्राणों के साथ लौट आने तक हमें इस भयंकर मांत्रिक के आदेशों का पालन करना ही सब तरह से हितकर होगा।"

ये बातें सुन दलपति क्रोध में आया और अपने दल के पचास सैनिकों को लक्ष्य करके बोला-"तुम लोगों ने इनकी बातें सुन ली हैं। मगर मैं इसे केवल जादू मानता हूँ। क्या हम इतने सारे सैनिक एक साथ हठात् हमला करके उस मांत्रिक और उसके अनुचरों का वध नहीं कर सकते?"

"लेकिन इस बीच मांत्रिक हमें हिरण और बाघों के रूप में अपने जादू के बल से बदल डाले तो तब हमारी दुर्गति क्या होगी? इस बात पर भी तो हमें विचार करना होगा न?" सैनिकों में से एक ने अपने साथियों की ओर देखते अपनी शंका प्रकट की।

"दलपति महोदय! हम राजा दुर्मुख का नमक खाते हैं, इसलिए ज़रूरत के वक़्त उनके वास्ते हमें अपने प्राण तक निछावर करने को तैयार होना चाहिए। लेकिन हमने अब जो बातें सुनीं, उसके आधार पर इस बात का क्या भरोसा है कि हमारे राजा अभी तक जीवित हैं? यदि उस भयंकर भल्लूक नें अपने परसु से

अब तक हमारे राजा का सर काट डाला हो तो हमारी हिम्मत और राज भक्ति बेकार ही हो जाएगी न?" एक और सैनिक ने आगे बढ़कर कहा।

ये शब्द सुनने पर दलपति के मन में लोभ पैदा हुआ। उसने एक बार चारों ओर नज़र दौड़ाकर अपने मन में सोचा–"अगर इन लोगों के कथनानुसार हमारे राजा का वध हो जाता है तो वह खुद गद्दी पाने का प्रयत्न क्यों न करे?" फिर प्रकट रूप में सैनिकों से बोला–"फिलहाल हम लोगों को चन्द्रशिला नगर पर हमला करने का विचार त्यागकर उदयगिरि नगर को लौट जाना ही उचित होगा।"

भल्लूक मांत्रिक ने अपने बाजू में खड़े कालीवर्मा को आँख का इशारा करके कहा–"कालीवर्मा, मैं तुम्हें दुर्मुख राजा के सैनिकों का नेता नियुक्त कर रहा हूँ। एक बार पूछकर देख लो, उस सैनिक टुकड़ी का नेता अपनी तलवार तुम्हारे हाथ सौंप देता है या नहीं?"

कालीवर्मा उसी वक़्त दलपति के निकट जाकर उच्च स्वर में बोला–"तुमने मेरे गुरु की बतें सुन ली है न? तुम अभी निर्णय करके बतला दो, तुम अपनी तलवार को मेरे हाथ सौंप दोगे या जमीन पर खिसका दोगे?"
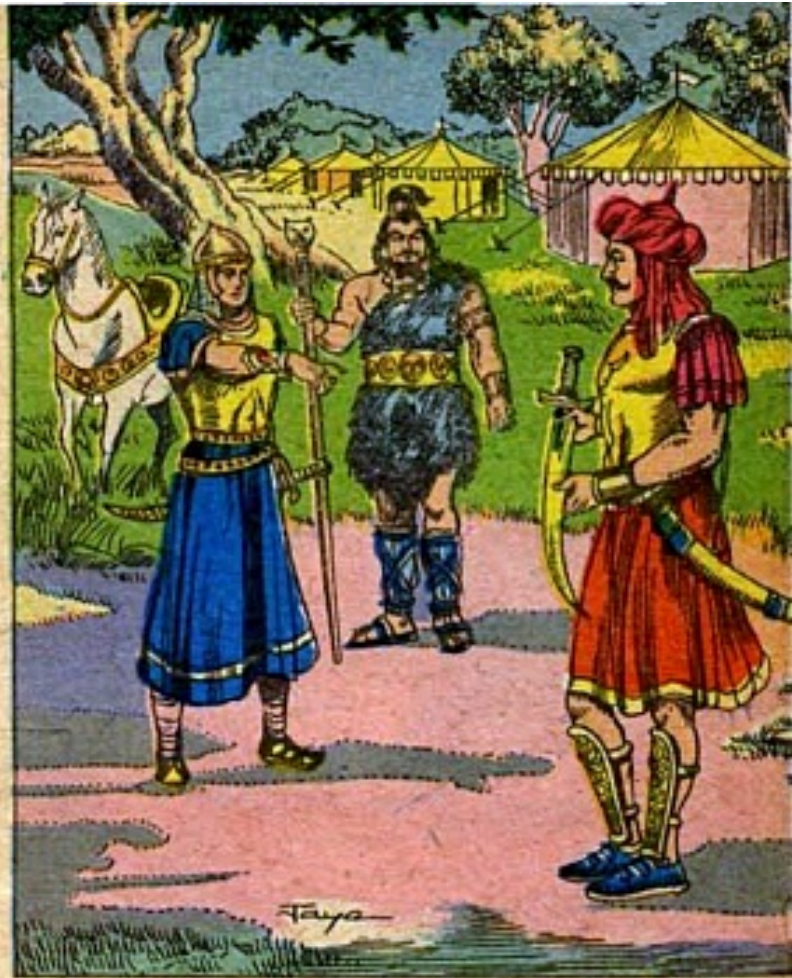
दलपति ने कालीवर्मा तथा भल्लूक मांत्रिक की ओर एक बार नज़र दौड़ाई। तलवारवाला उसका हाथ कांप रहा था, वह धीमी आवाज़ में बोला–"अगर मैं तलवार आप के हाथ म सौंप दूँ तो इसका मतलब है कि मैंने हमारे राजा दुर्मुख के प्रति राजद्रोह किया है! क्या आप जैसे बुद्धिमानों का हमें राजद्रोह करने का आदेश देना उचित होगा?"

"यह तो बुद्धिमानी का ही प्रश्न कहा जाएगा। लेकिन यह बताओ कि तुम्हारे राजा का एक भालू से डरकर तुम सब को खतरे में डाल इस प्रकार भाग जाना क्या राजोचित कार्य कहा जा सकता है?" यों

कहकर भल्लूक मांत्रिक ने दलपति के बगल में स्थित सैनिक का हाथ पकड़कर उसे पीछे घुमाया, उसकी पीठ पर अपने मंत्र दण्ड को टिकाकर बोला–"लो, देखो, मैं यहाँ पर एक लेपन लगा रहा हूँ। तुम और तुम्हारे अनुचर इसके सहारे अच्छी तरह से देख लो, तुम्हारे राजा कैसी दुरवस्था में है!"

दूसरे ही क्षण सैनिक की पीठ पर वर्दी का सारा हिस्सा श्यामवर्ण का हो दमकने लगा। उसके भीतर एक जंगल में घोड़ों को तेजी से दौड़ाते राजा दुर्मुख और उसका अंग रक्षक साफ़ दिखाई दिये। उनका पीछा करते बधिक भल्लूक दौड़ रहा था। आगे जानेवाले दुर्मुख के घोड़े पर एक पेड़ की ओट में से बाहर निकल कर एक हाथी अपनी सूंड से प्रहार करने को हुआ। इसे देख राजा दुर्मुख जोर से चीख उठा, हाथी के प्रहार से बचकर अपने अंग रक्षक के साथ दूसरी दिशा में भाग खड़ा हुआ।

अब अचानक दुर्मुख का पीछा करनेवाले बधिक भल्लूक को सामने आते देख हाथी उसे अपनी सूंड से ऊपर उठाने को हुआ। बधिक भयंकर रूप से चिल्ला उठा और हाथी की सूंड पर अपने परसु का प्रहार किया। सूंड आधा कटकर लटकने लगी। वह भीकर चिंघाड करते पीछे हटने को हुआ, तभी बधिक भल्लूक उसकी गर्दन पर सवार हुआ। उसके कुंभस्थल पर परसु की मूठ का प्रहार करके गरज उठा–"वह दुष्ट दुर्मुख कहाँ? उसका पीछा करके पकड़कर उसका सर काट डालना होगा।"

इस बीच राजा दुर्मुख जंगल में बड़ी दूर तक भाग गया था। उसे इस बात का डर सताने लगा कि बधिक भल्लूक के साथ हाथी भी उसका पीछा कर रहा है। अंग रक्षक ने दुर्मुख को सावधान करते हुए कहा–"महाराज! लगता है कि हम रास्ता भटककर हमारे राज्य की सीमा पार करके चले जा रहे हैं।"

इस पर दुर्मुख गुस्से में आकर बोला– "अरे मूर्ख! क्या जान से बढ़कर राज्य की सीमाएँ कहीं मूल्यवान होती हैं?" यों कहते घोड़े पर चाबुक चलाई।

उधर भल्लूक मांत्रिक ने सैनिक की पीठ पर अपने मंत्र दण्ड का वार किया। सैनिक पीड़ा के मारे उछल पड़ा। तब भल्लूक मांत्रिक बोला–"मैंने सैनिक की पीठ पर जो लेपन किया था, उसे इसने खराब कर डाला। कोई बात नहीं! तुम लोगों ने अपने राजा को भागते खुद देख लिया है। अब इसका क्या जवाब देते हो?" मांत्रिक ने दलपति और उसके सैनिकों से पूछा। भल्लूक मांत्रिक की शक्ति से परिचित दुर्मुख के सैनिक एक स्वर में चिल्ला उठे–"आप ही बताइये, हमें क्या करना होगा?"

"तब तक तुम लोग मेरे साथ चन्द्रशिला नगर को चलिये! वहाँ के राजा जितकेतु की खबर लेनी है। सुनो, इस पल से तुम लोगों का नेता कालीवर्मा है।" भल्लूक मांत्रिक ने अपना आदेश सुनाया।

इसके बाद सब लोग चन्द्रशिला नगर की ओर चल पड़े। उस वक्त उधर जंगल में भागनेवाले राजा दुर्मुख और उसके अंग रक्षक को पेड़ों की डालों में छिपे डाकुओं का नेता नागमल्ल ने देखा। उसने अपने अनुचरों से कहा–"अबे, आगे घोड़े पर चलनेवाले की पोशाक देखने से ऐसा मालूम होता है कि यह कोई संपन्न

परिवार का है। उसके पीछे चलनेवाला व्यक्ति उसका नौकर या सैनिक होगा। अगर हम उन दोनों को प्राणों के साथ बंदी बनावे तो उन्हें छुड़ानेवाले उनके रिश्तेदारों से एक बड़ी रक़म वसूल की जा सकती है।"

उस वक़्त नागमल्ल का एक अनुचर अपने हाथ के रस्से को इधर-उधर घुमाते बोला–"मालिक! उनके सामने जाकर प्राणों के साथ बन्दी बनाना मुमक़िन मालूम नहीं होता। वे लोग तलवारों से हमारा सामना कर सकते हैं। इसलिए यह रस्सा फेंककर उसके जाल में पहले एक को फँसाना क्या उचित न होगा?"

"अरे, तुमने बड़ी सूझ-बूझ की बात बताई। देखो, वे इसी ओर आ रहे हैं। हमारी पकड़ की सीमा के अन्दर आते ही सबसे पहले तुम घोड़े पर आनेवाले आगे के व्यक्ति की कमर में फंदा कसवाकर खींच लो, दूसरे की बात हम दोनों देख लेंगे।" नागमल्ल ने बताया।

राजा दुर्मुख और उसके अंग रक्षक को इस बात का ख्याल तक न था कि उस महा जंगल में भल्लूक मांत्रिक के भालू के अतिरिक्त दूसरों के द्वारा भी उनकी जान के लिए खतरा उपस्थित हो सकता है। वे लोग तो जहाँ तक हो सके जल्दी बधिक भल्लूक से दूर भागने की चिंता में थे।

दुर्मुख जब पेड़ के समीप पहुँचकर उसकी डालों के नीचे से अपने घोड़े को दौड़ा रहा था, तब नागमल्ल के एक अनुचर ने अपने हाथ के फंदे को दुर्मुख की ओर फेंका। फंदा जब राजा की कमर में कस गया, तब उसने डालों की ओर उसे खींच दिया। घोड़ा तेजी से आगे बढ़ गया। दुर्मुख की समझ में न आया कि उस पर क्या बीतने जा रहा है, वह एक दम चीखकर रस्से में लटकने लगा। उसी समय नागमल्ल और उसका दूसरा अनुचर भीकर गर्जन करते तलवार चमकाते डालों में से अंग रक्षक के घोड़े के आगे कूद पड़े।

(और है)

पापी का पुण्य

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास पहुँचा। पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन! क्या आप ने कोई पाप करके उनसे मुक्त होने के लिए इस प्रकार श्रम करने का संकल्प कर लिया है? क्योंकि पापों का इस प्रकार परिहार होने के उदाहरण स्वरूप में आप को शरभ की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा: शरभ एक करोड़पति का पुत्र है। अपने पिता की मृत्यु के बाद उसने धन के द्वारा जो सुख साध लिये जा सकते हैं, उन सुखों को दिल भरकर भोगा। उन सुखों के वास्ते उसने अनेक पाप भी किये। ऐसा कोई अन्याय और अनीति नहीं है जिसका उसने

बेताल कथाएँ

अवलंबन न किया हो। उसकी सारी जवानी सुख-भोगों में बीत गई, लेकिन अब वह अपनी बीती ज़िंदगी की याद कर पछताने लगा। दुष्ट आदमी भी अनेक पाप कार्यों के साथ थोड़े से अच्छे काम करके अपनी ज़िंदगी में पुण्य कमाता है। मगर शरभ ने अपनी भूतकालीन ज़िंदगी की याद की तो उसे लगा कि उसने एक भी अच्छा कार्य नहीं किया और रत्ती भर भी पुण्य नहीं कमाया है।

इस वजह से शरभ की ज़िंदगी पूर्ण रूप से बदल गई। उसके मन में सुख-भोगों के प्रति विरक्ति पैदा हुई और उसने अपना शेष जीवन दान-धर्म करने और पुण्य कार्य करने का निश्चय किया।

शरभ के प्रति जिन लोगों के मन में दुर्भावना थी, वे लोग भी अब उसमें मानसिक परिवर्तन देख देवता के समान मानने लगे। उसकी दानशीलता ने दान लेनेवाले याचकों को भी चकित कर दिया, लेकिन उसकी पत्नी और पुत्रों ने सोचा कि शरभ का दिमाग ख़राब हो गया है। वे लोग यह सोचकर डर गये कि शरभ दान-धर्मों के पीछे सारी जमीन-जायदाद और संपत्ति खतम कर देगा। इसलिए उन लोगों ने जोर डाला कि शरभ अपनी जायदाद का बंटवारा कर दे। इस पर शरभ ने कोई आपत्ति नहीं उठाई। उसने सोचा कि उसके पापों का परिहार उसकी निजी संपत्ति के द्वारा ही संभव है।

शरभ के हिस्से में जो कुछ जायदाद प्राप्त हुई, वह सब जल्द ही दान-धर्मों के पीछे खर्च हो गई। आखिर वह अपने हिस्से का मकान तक बेचकर कंगाल बन बैठा। तब वह अपना शेष जीवन तीर्थाटन में बिताने का संकल्प करके घर से निकल पड़ा।

जब शरभ एक जंगल के रास्ते से गुजर रहा था, तब एक स्थान पर एक ब्रह्मराक्षस ने उसके रास्ते को रोककर पूछा—"महाशय, आप देखने में उत्तम पुरुष मालूम होते हैं। क्या मेरा एक उपकार कर सकते हैं?"

शरभ ब्रह्मराक्षस को देख डरा नहीं, उसने पूछा—"बताओ, क्या चाहते हो?"

"मैंने असंख्य पाप किये, परिणाम स्वरूप एक ब्रह्मराक्षस के रूप में अपने दिन काट रहा हूँ। अगर आप अपना पुण्य मुझे दान कर दे तो मुझे इस राक्षस के रूप से मुक्ति मिल जाएगी।" ब्रह्मराक्षस ने कहा।

"मैं ज़रूर ऐसा ही करूँगा।" ये शब्द कहते शरभ ने अपना सारा पुण्य ब्रह्मराक्षस को दान कर डाला। फिर भी ब्रह्मराक्षस का रूप नहीं बदला। वह निराश हो ताना देते हुए बोला—"अजी महाशय! आप ने पुण्य कहीं कमाया हो, तब न मुझे दान कर सकते थे?"

मगर इतने में ही आसमान में से एक देव विमान उनके समीप में आ उतरा। ब्रह्मराक्षस परमानंदित हो उस पर सवार होने को हुआ। पर देव सारथी ने ब्रह्म राक्षस को धक्का देकर शरभ को विमान

में बिठा लिया। ब्रह्मराक्षस के देखते विमान आसमान में उड़कर चला गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, शरभ ने अपनी सारी संपत्ति दान-धर्मों के पीछे खर्च कर डाली, उसके तहत पुण्य क्यों नहीं रह गया? क्या उसने जो दान-धर्म किये, वे उसके पापों के परिहार के लिए पर्याप्त न थे? या उसने पुण्य कमाने के स्वार्थ से प्रेरित होकर दान-धर्म किया था, इस कारण से? चाहे जो हो, शरभ ब्रह्मराक्षस को मुक्ति दिला नहीं पाया, उल्टे वह शरीर के साथ स्वर्ग चला गया। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो आपका सिर फूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– "यह कहना गलत बात है कि शरभ ने पुण्य नहीं कमाया है। उसने अपनी बीती ज़िंदगी के बारे में जिस क्षण पश्चात्ताप किया, तब से उसने काफी पुण्य कमाया है। उसके मन में किसी भी प्रकार का स्वार्थ नहीं है। अगर ऐसा होता तो वह अपने परिवार के लोगों की संपत्ति भी पुण्य पाने के वास्ते दान कर बैठता। इससे भी उत्तम उदाहरण यह कहा जा सकता है कि उसी की भांति अनेक पाप करके भयंकर ब्रह्मराक्षस का जन्म धारण करनेवाले की मुक्ति के वास्ते वह अपना सारा पुण्य दान करने को तैयार हो गया। मगर ब्रह्मराक्षस के मन में अपार स्वार्थ था। शरभ की तुलना में वह नीच और हीन व्यक्ति था। इसलिए वह दूसरों के पुण्य के द्वारा मुक्ति पाना चाहता था। इसीलिए उसकी इच्छा की पूर्ति न हुई और उसे ब्रह्मराक्षस के रूप में ही रहना पड़ा। स्वार्थ हीन शरभ के वास्ते देवताओं ने विमान भेजा है तो इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है क्योंकि उसने अपनी करनी पर पश्चात्ताप प्रकट किया था।"

इस प्रकार राजा के मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

अविश्वास

मणिपुर के राजा चन्द्रसेन का ज्योतिष्य पर अपार विश्वास था। उसने पड़ोसी देश के साथ युद्ध करना चाहा। इसलिए ज्योतिषियों को बुलवाकर भविष्य बताने का आदेश दिया। ज्योतिषियों ने राजा की जन्मकुंडली देख बताया–"महाराज! इस वर्ष की ग्रह-गति यह सूचित करती है कि शत्रु के हाथ आपकी पराजय होगी।"

इस पर राजा ने युद्ध का प्रयत्न त्याग दिया।

एक वर्ष बीत गया। मंत्री ने राजा को ज्योतिषियों की बात याद दिलाकर कहा–"महाराज! आप ज्योतिषियों की बातों पर कभी विश्वास न कीजिएगा! उन लोगों ने कहा था कि गत वर्ष आपकी शत्रु राजा के हाथों में पराजय होगी। मगर न आपने पिछले साल युद्ध किया और न आपकी पराजय ही हुई।"

इस पर ज्योतिष्य के प्रति राजा का विश्वास जाता रहा। —धर्मचन्द नाहर
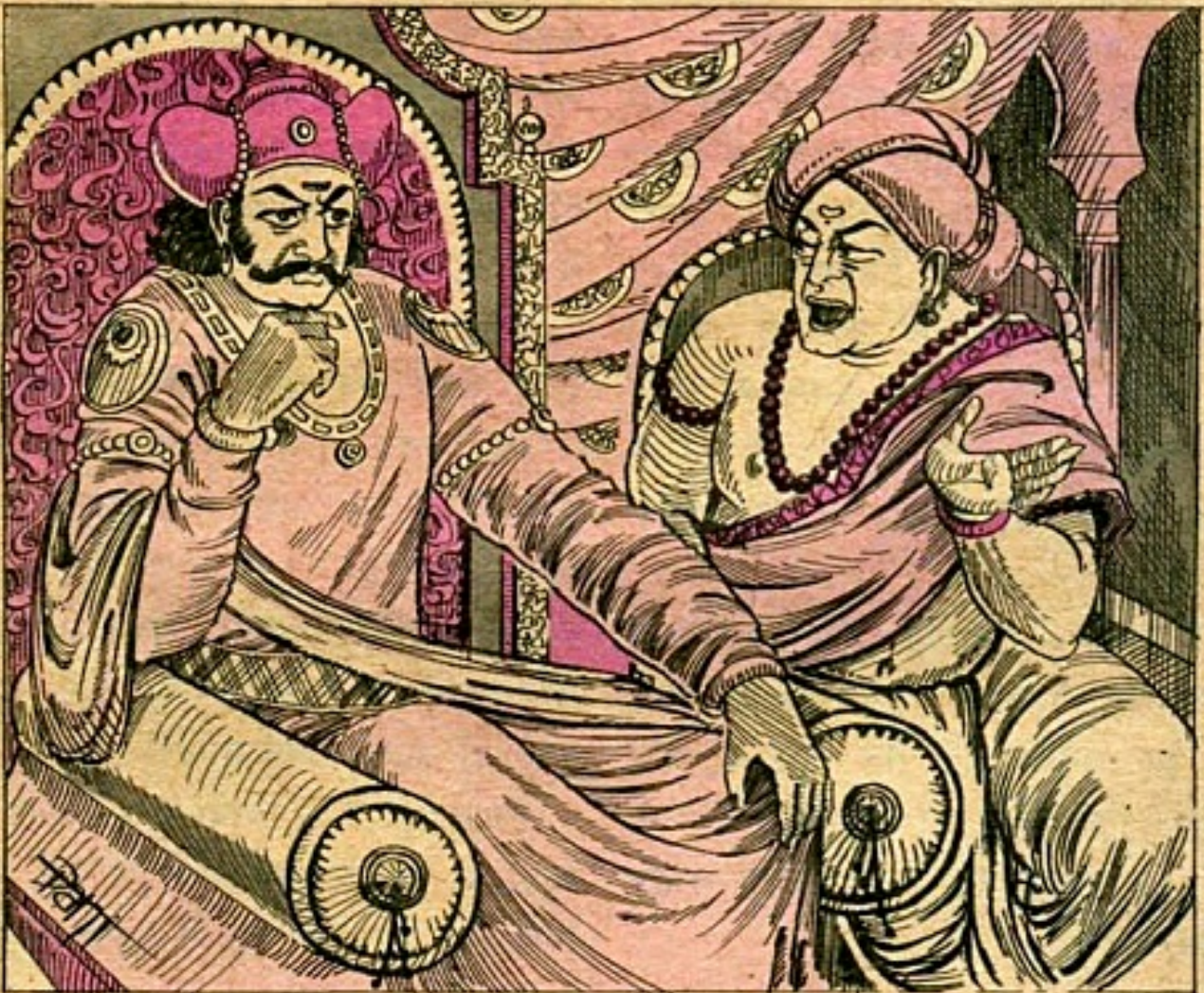
घबड़ाहट

विद्यावती वैसे स्वभाव से आलसी न थी, लेकिन उसे जो भी काम करना होता, उसे बढ़ा-चढ़ा मानकर घबड़ा जाती ।

विद्यावती का पति राजदरबार का एक कर्मचारी था । वह सुबह दरबार में जाता तो रात को ही घर लौटता था । उसके घर से निकलते ही विद्यावती गपशप लड़ाने अड़ोस-पड़ोस के घरों में जाकर बैठ जाती । वह मजाक़ करने में चतुर थी, इस वजह से जिस किसी भी घर में जाती, लोग उसे काफ़ी देर तक बिठा देते थे ।

विद्यावती घबड़ाहट और जल्दबाजी दिखाते हुए कहती—"बहन! मैं देरी तक कैसे बैठ सकती हूँ? मेरे पति के आने के पहले मुझे रसोई जो बनानी है!" यों रात की रसोई की चिंता करके नाहक़ घबड़ा जाती!

"रसोई बनाने में क्या देर लगती है? तुम तो सिर्फ़ दो प्राणी हो!" यों कहते एक गृहिणी सब्जी हाथ में थमा देती तो दूसरी चटनी । फिर भी वह यह सोचकर परेशान हो उठती, मगर अपने पति के लौटने के बाद ही उसकी मदद से ही वह अपना काम पूरा कर देती!

अगर कोई उसे काम की मदद देने के लिए अपने घर बुला लेती तो कहती—"ओह! आज तो मुझे अपने पति के कपड़े धोने हैं ।" या कभी कह बैठती—"मुझे बर्तन मांझने हैं!" इस तरह कोई न कोई बहाना बना देती! सभी औरतें विद्यावती की प्रकृति से परिचित थीं, इस कारण कोई भी उसकी मदद मांगती न थी ।

विद्यावती के दो ननदें थीं । दोनों की शादी हो गई थी और ससुराल गई थीं । विद्यावती का पति अपनी बहनों को दिल

रामनिवास शर्मा

से चाहता था। उन्हें मूँगफली और लाजे बहुत ही प्रिय थे। क्योंकि जिस प्रदेश में वे रहा करती थीं, वहाँ ये दोनों चीज़ें मिलती न थीं।

विद्यावती के पति ने अपनी बहनों के वास्ते एक थैली भर मूँगफली और धान खरीदा। अपनी पत्नी से बोला–"सुनो, मेरी बहनें आनेवाली हैं। तब तक तुम मूँगफली के छिलके निकालकर, धान से लाजे बना लो। वे दोनों तुम्हारी कुशलता और प्यार देख निहाल हो जायेंगी! बाक़ी समयों में चाहो, तुम कुछ न करो, मगर अब तो ये दोनों काम ज़रूर पूरा करो।"

यों तो विद्यावती ने अपने पति के सामने हाँ तो किया, मगर उसका दिल धड़कने लगा! उसका मन इसी काम में लगा रहा। जब भी वह किसी के घर जाती तो यही कह देती–"मेरी ननदें आनेवाली हैं। थैली भर मूँगफली के छिलके निकालने हैं। थैली भर धान के लाजे बनाने हैं।" विद्यावती ने कभी किसी की मदद न की थी, इसलिए कोई उसकी मदद करने आगे न आई!

रोज विद्यावती यही सोचती कि आज ये दोनों काम शुरू करने हैं। मगर ज्यों ही उस काम में लग जाती तो उसकी कल्पना मात्र से उसका कलेजा धक् धक् कर बैठता। सोचती–"उफ़! कितना बड़ा काम है! इस काम में लग जाती हूँ तो कब जाकर यह पूरा होनेवाला है!" यों विचारकर वह अपने मन को हल्का करने के लिए गपशप करने चली जाती, मगर वह कहीं भी निश्चित बैठ नहीं पाती थी। आनेवाली ननदों और काम की याद करके घबड़ा जाती।
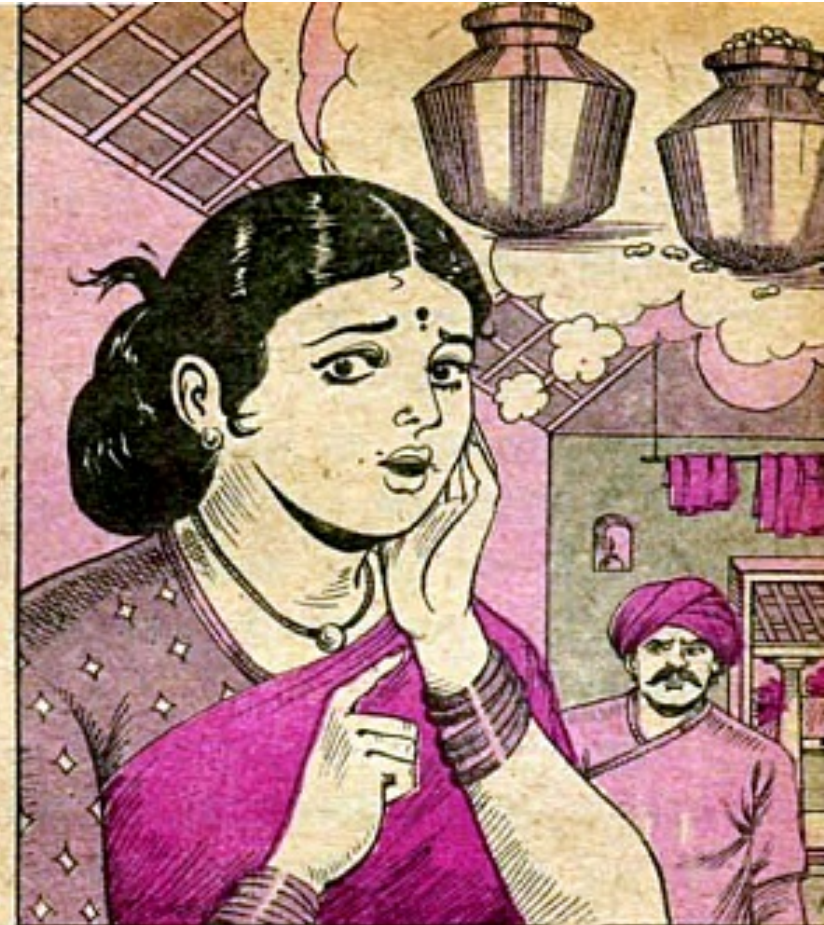
अपनी ननदों के आने के दस दिन पहले से ही उसने गपशप लड़ाने पड़ोसी घरों में जाना बंद किया। सब औरतें यह सोचकर उसके प्रति सहानुभूति दिखाने लगीं, न मालूम विद्यावती को कौन-सा बड़ा काम आ पड़ा है। पर असली बात

यह थी कि विद्यावती की गैरहाज़िरी में उनका समय कटता न था। वे सब उसे बुलाने पहुँची। मगर विद्यावती ने काम में व्यस्त रहने का अभिनय करके ड्योढ़ी पर से ही उन्हें वापस कर दिया।

एक दिन दुपहर को कोई जादूगर आया। उस गली की सारी औरतों ने जादू के करिश्मे देखे, मगर विद्यावती उस ओर पटकी तक नहीं। उसने यही कहा– "मेरी ननदें आनेवाली हैं। ढ़ेर सारा काम पड़ा है।"

इसी तरह काशी से चूडीवाला आवे या कांची से रेशमी साड़ीवाला भी आ जावे तो उन्हें देखने या सौदा करने तक वह विद्यावती बाहर नहीं आती थी। सब से बताया कि उसकी ननदें आ रही हैं, पल भर भी उसे फ़ुरसत नहीं है। उसके चेहरे की घबड़ाहट को देख सभी औरतों ने यही सोचा कि उसकी ननदें बड़ी झगडालू होंगी। इसलिए विद्यावती की ननदों को देखने के कुतूहल को लेकर सब औरतें उनके आगमन का इंतज़ार करने लगीं। आखिर विद्यावती की ननदें आ ही पहुँचीं। वे दोनों अपनी भाभी के साथ कैसा व्यवहार करती हैं, यह तमाशा देखने के लिए उस दिन दुपहर को सब विद्यावती के घर पहुँचीं। मगर वहाँ के दृश्य को देख वे आश्चर्य चकित हो गईं।

विद्यावती की ननदों में से एक मूँगफली के छिलके निकाल रही थी, दूसरी लाजे भून रही थी। पर विद्यावती परेशान से इधर-उधर घूम-फिर रही थी।

पड़ोसी औरतों में से एक बोली– "अरी, बस, इसी के वास्ते विद्यावती घर से निकली तक नहीं?"

विद्यावती बोली–"काम की याद करने से मेरे हाथ-पैर जवाब दे जाते हैं। इसलिए मैं इतने दिनों तक घर से बाहर तक निकल न पाई।"

"हमारी भाभी नाहक़ घबड़ा जाती हैं।" यों ननदों ने सारी बातें सुनने के बाद हँसते हुए जवाब दिया।

मूर्ख मंत्री

एक मूर्ख राजा के यहाँ दो मंत्री थे।

उनमें रंजन बड़ा ही विवेकशील था और भंजन परम मूर्ख था। भंजन राजा के जैसे मूर्ख था। इसलिए वह उसकी सलाहों को ज्यादा मानता था। इस कारण जनता को अनेक तकलीफ़ों का सामना करना पड़ता था। जनता सोचने लगी कि आखिर इन तकलीफ़ों से कैसे मुक्ति मिलेगी।

इस बीच गवाक्ष नामक एक युवक को एक युक्ति सूझी। वह सब किसी से कहने लगा कि उसका विवाह राजकुमारी के साथ हो गया है। यह खबर राजा के कानों तक पहुँची। राजा ने गवाक्ष को बुलवाकर पूछा–"सुना है कि तुम सब किसी से बता रहे हो कि तुम्हारी शादी मेरी पुत्री के साथ हो गई है। क्या यह बात सच है?"

"महाराज! ये दोनों बातें सच हैं। चाहे सपने में भी क्यों न हो, राजा के दामाद बन जाना बड़ी बात है न?" गवाक्ष ने जवाब दिया। इस पर राजा ने अपने मंत्रियों से सलाह माँगी।

रंजन ने कहा–"महाराज! गवाक्ष का राजकुमारी के साथ विवाह करने का सपना देखना गलत नहीं है, लेकिन उसने सर्वत्र इसका प्रचार किया है, इस अपराध में उसे उचित दण्ड देना चाहिए।"

इसके बाद भंजन ने अपनी राय दी–"महाराज, गवाक्ष जैसे एक साधारण व्यक्ति का राजकुमारी के साथ विवाह करना बहुत बड़ा अपराध है। इसे फांसी के तख्ते पर चढ़ाना होगा।"

फिर क्या था, गवाक्ष की सुनवाई शुरू हुई। एक सार्वजनिक सभा बुलाई गई। इसे देखने लोगों की भारी भीड़ लग गई।

संजय भगत

अनोखी वसूली

एक बार शिवराम ने बकरी खरीदने के लिए हाट में शेषाद्रि से दस सिक्के कर्ज लिये। जल्द ही बकरी मर गई। इस पर शिवराम का मन कर्ज चुकाने को न हुआ। अपना कर्ज वसूल करने जब भी शेषाद्रि शिवराम के घर पहुँचता, उसकी पत्नी यही कहा करती थी कि शिवराम घर पर नहीं है।

शिवराम के घर के सामने गणपति का मकान था। उसने शिवराम को धमकी दी–"तुम घर में रहते हुए यह कहला देते हो कि घर पर नहीं हो, मैं यह बात शेषाद्रि को बता देता हूँ।" इस पर शिवराम ने एक सिक्का घूस देकर उसका मुँह बंद कराया। लेकिन गणपति चुप न रहा। उसने इस प्रकार कई बार धमकी देकर कई सिक्के वसूल किये।

एक बार अचानक शेषाद्रि की शिवराम से भेंट हुई। शिवराम ने उससे कहा–"भाई, नाराज़ मत होओ। मैं जल्दी तुम्हारा कर्ज चुका दूंगा।"

तब शेषाद्रि ने कहा–"गणपति ने वसूल करके दे दिया है। अब तुम्हें कर्ज चुकाने की कोई ज़रूरत नहीं है।"

—रामचन्द्र तिवारी

गवाक्ष ने सब के समक्ष यह स्वीकार कर लिया कि उसने सपना ज़रूर देखा है। इस पर राजा ने गरजकर पूछा—"सपने में राजकुमारी के साथ शादी करने की तुम्हारी कैसी हिम्मत है?"

"महाराज! आप मुझे क्षमा करें। मैं जानता हूँ कि मैं राजकुमारी के जूते भी साफ़ करने की लियाक़त नहीं रखता। मेरे रो-धोने व मना करने पर भी अनसुनी करके हमारे पड़ोसी राजा भल्लूक वर्मा ने राजकुमारी के साथ ज़बर्दस्ती मेरा विवाह कराया है।" गवाक्ष ने कहा।

यह बात सुनने पर राजा आग बबूले हो बोला—"भल्लूक वर्मा की ऐसी हिम्मत? उसका घमण्ड तोड़ना होगा! क्यों रंजन मंत्री? आप की क्या राय है?"

"महाराज! यह तो सपना था? अकारण पड़ोसी राजा के साथ झगड़ा मोल लेना राज्य के लिए हितकर नहीं है। पर राजवंश की मर्यादा भंग करने के अपराध में गवाक्ष को केवल दण्ड देना हमारा कर्तव्य है।" रंजन मंत्री ने समझाया।

"भंजन मंत्री, तुम्हारी क्या राय है?" राजा ने पूछा।

"महाराज! भल्लूकवर्मा को अगर हम क्षमा कर दे तो इसका मतलब होगा कि हम कायर हैं! इसलिए उसका सर कटवाना

ही होगा।" भंजन ने अपनी राय दी। राजा ने सेनापति की ओर मुड़कर आदेश दिया—"सेनापति! तुम तुरंत सेना को तैयार करो! राजपुरोहित के द्वारा हमला करने के लिए मुहूर्त निश्चित करवा दो! यह काम मिनटों में हो जाना चाहिए!"

इस बीच गवाक्ष ने दखल देते हुए कहा—"महाराज! आप ने मेरे सपने का समाचार पूरा नहीं सुना। जानते हैं कि भल्लूक वर्मा ने मेरी शादी कैसे कराई? वह पहले हमारे राज्य पर चढ़ाई कर बैठा और उसने इन रंजन और भंजन मंत्रियों के सामने ही आप का संहार किया! इस पर रंजन मंत्री ने आप की

मृत्यु पर दुखी हो कहा–"देवता जैसे राजा के मरने के बाद मेरा ज़िंदा रहने से फ़ायदा क्या है?" तब छुरी से अपनी छाती में भोंककर आत्महत्या कर ली।"

यह बात सुनकर राजा प्रसन्न हो गया और रंजन मंत्री के साथ आलिंगन करके गवाक्ष से पूछा–"उस वक़्त भंजन मंत्री क्या कर रहा था?"

गवाक्ष ने आँखों में आँसू भरकर कहा–"महाराज! जब आप की मृत्यु पर सारी प्रजा रो रही थी, तब भंजन मंत्री महोदय भल्लूक वर्मा के पैरों पर गिरकर बोले–"मैं आप की शरण में आया हूँ! मुझे बचाओ।" इस पर भल्लूक वर्मा ने भंजन मंत्री को अपना मंत्री नियुक्त किया। भंजन मंत्री ने खुश होकर भल्लूक वर्मा के जयकार किये।"

ये शब्द सुनने पर राजा की आँखें क्रोध से लाल हो उठीं। उसने कहा–"भंजन मंत्री ऐसा विश्वासघातक है? शिरच्छेद ही इसके लिए उचित दण्ड है।"

रंजन के मुँह से अनायास ये शब्द निकले–"शिव! शिव!"

"भंजन मंत्री! तुम इसका क्या जवाब देते हो?" राजा ने अपनी आदत के मुताबिक़ पूछा।

भंजन राजा की मूर्खता को अच्छी तरह से जानता था, इसलिए वह आपाद मस्तक कांपते हुए बोला–"महाराज! क्षमा कीजिए! जान रही तो भीख माँगकर भी पेट भर सकता हूँ। आप की आज्ञा हो तो मैं इस राज्य को छोड़कर दूर चला जाऊँगा।"

उसी दिन भंजन उस देश को छोड़कर चला गया। उसके जाते ही राजा ने रंजन मंत्री से पूछा–"रंजन मंत्री, मैं इस गवाक्ष को कोई पुरस्कार देना चाहता हूँ' क्या दूँ?"

"महाराज! अफ़वाह तो उड़ गई है। राजकुमारी के साथ गवाक्ष की शादी करा दीजिए।" रंजन ने गवाक्ष के प्रति कृतज्ञता के भाव से कहा।

सजाति-विजाति

एक गाँव में सुनार और लुहार की दूकानें अगल-बगल में थीं। एक दिन सुनार छोटी हथौड़ी से सोने को पीट रहा था, उस वक्त सोने की एक टुकड़ी आकर लुहार की दूकान में आ गिरी।

जहाँ सोने की टुकड़ी गिरी थी, वहाँ लोहे की भी एक टुकड़ी थी। उसने सोने की टुकड़ी से पूछा–"अरी बहन, तुम अपनी दूकान को छोड़ क्यों यहाँ आ गई हो?"

"मैं क्या बताऊँ? मुझे साँचे में डाल हथौड़ी से पीट रहा है। उस मार को सहन न कर पाई। इसलिए यों उड़कर चली आई। मुझे दुख तो इस बात का है कि मैं अपनी जाति के वाले से नहीं, दूसरी जाति के हाथ मार खाती हूँ।" सोने की टुकड़ी ने कहा।

"मैं अपना दुखड़ा किसे सुनाऊँ? मुझे जलनेवाली भट्टी में तपा कर हथौड़े से पीटते हैं! पीटनेवाला अगर दूसरी जाति का हो तो मैं सहन कर लेती। मगर मेरी ही जाति का आदमी मुझे पीट कर चटनी बना देता है।" लोहे की टुकड़ी ने जवाब दिया।

—ज्योति भूषण

हार-जीत

कीर्तिवर्मा के मन में सारी दुनिया जीतने की इच्छा पैदा हुई। मंत्री ने समझाया– "महाराज! आप अपने कुलगुरु राजर्षि की सलाह लीजिए।"

राजर्षि के आश्रम में जाकर कीर्तिवर्मा ने अपनी कामना व्यक्त की।

राजर्षि ने समझाया–"राजन, आप अगर अपने क्रोध पर नियंत्रण कर सके तो जरूर दुनिया को जीत सकते हैं। आप क्रोध पर विजय करके तब मेरे पास आइये। तब मैं आप को दुनिया को जीतनें का उपाय बता दूंगा।"

पंद्रह दिन बाद कीर्तिवर्मा ने राजर्षि से मिलकर पूछा–"गुरुजी! मैंने क्रोध पर विजय पाई है। दुनिया को जीतने का उपाय बताइये।"

"राजन! मैंने इस साहस के साथ यह बात कही थी कि आप क्रोध पर विजय नहीं पा सकेंगे। लेकिन सचमुच दुनिया को जीतने का उपाय मैं नहीं जानता।" राजर्षि ने उत्तर दिया। कीर्तिवर्मा क्रोध में आया। म्यान से तलवार खींचकर गरज उठा–"क्या आप मेरे साथ मज़ाक करते हैं?"

"महाराज! शांत होइए! आप क्रोध को ही जीत न पाये, दुनिया को कैसे जीत सकेंगे?" राजर्षि ने कहा।

—सुदर्शन नारंग
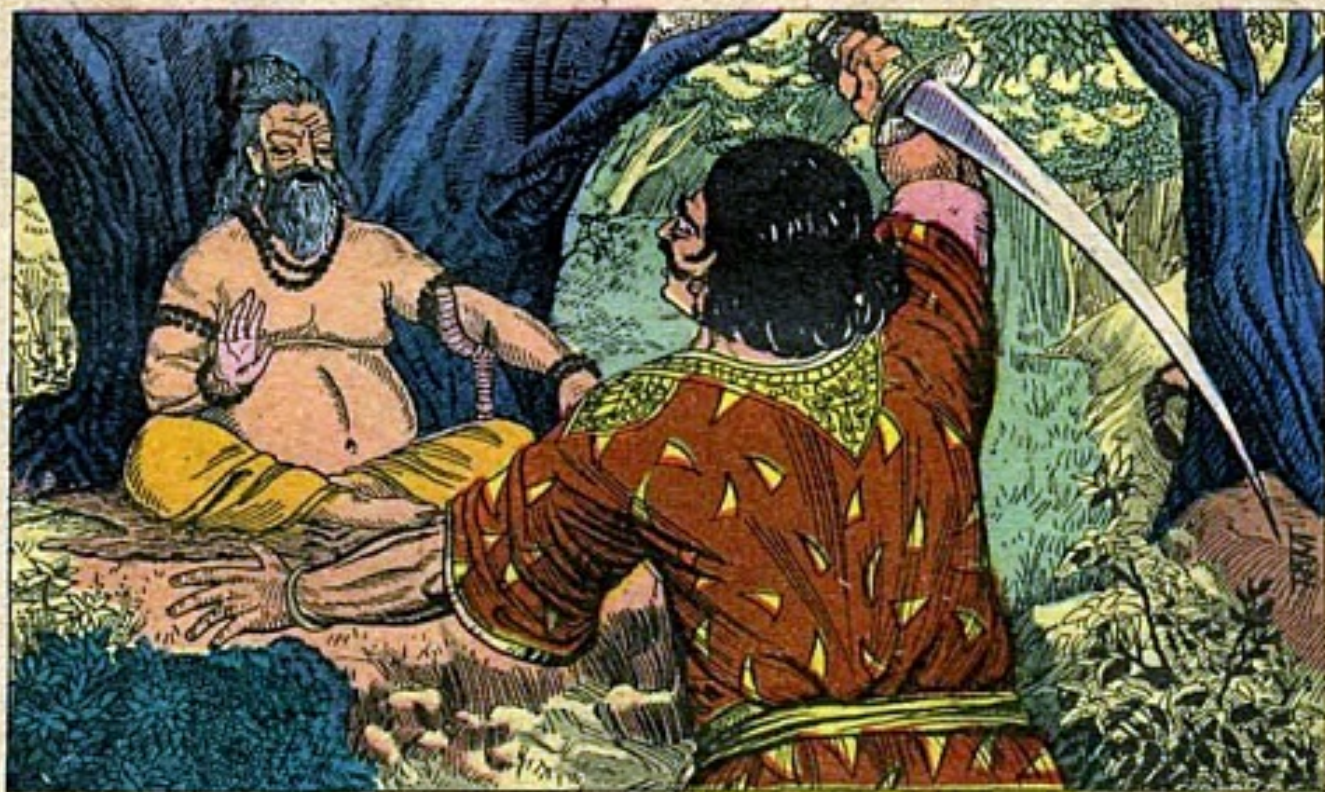
दशावतार
परमात्मा त्रिमूर्तियों के रूप में सृष्टि, स्थिति और लयकारक होते हैं। ब्रह्मा के रूप में विश्व की सृष्टि करते हैं, विष्णु के रूप में उसका पोषण करते हैं और शिव के रूप में उसका लय करके नयी सृष्टि का अवसर प्रदान करते हैं। जगत का परिणाम चालू करने के लिए विष्णु जब-तब अवतार लिया करते हैं। एक बार जब प्रलय हुआ और सारा विश्व उसमें डूब गया, तब विष्णु ने मत्स्य अवतार लेकर मनु, सप्तर्षि तथा अन्य प्राणियों की रक्षा करने के हेतु उनकी नाव को हिमालय के शिखर पर पहुँचा दिया। मनु ने प्राणियों की पुनः सृष्टि की।
एक राक्षस वेदों को चुराकर समुद्र के गर्भ में छिप गया, तब मत्स्यावतार ने उस राक्षस का वध करके वेदों को मनु के हाथ सौंप दिया।

देवता और दानवों ने मंदर पर्वत को मथनी तथा सर्प राजा वासुकी को रस्सा बनाकर अमृत के वास्ते जब समुद्र का मंथन किया, तब मंदर पर्वत जल में डूबने लगा। उस समय विष्णु ने कूर्मावतार धारण कर उस पर्वत को अपनी पीठ पर तैरने लायक़ बनाया।

एक बार हिरण्याक्ष नामक दानव ने पृथ्वी को लपेटकर समुद्र में उसे डुबो दिया, तब विष्णु ने वराह अवतार लेकर दानव का वध किया और जल से भूदेवी का उद्धार किया।

हिरण्याक्ष का छोटा भाई हिरण्य कश्यप विष्णु का द्वेषी था, लेकिन उसका पुत्र प्रह्लाद विष्णु का बड़ा भक्त था। प्रह्लाद ने जब कहा कि विष्णु सर्वत्र व्याप्त हैं, उसे झूठा साबित करने के लिए हिरण्य कश्यप ने एक स्तम्भ को लात मारकर तोड़ डाला। उस स्तम्भ में से विष्णु ने नरसिंह रूप में अवतरित होकर हिरण्य कश्यप का वध किया।

प्रह्लाद के पोते बलि ने तीनों लोकों पर विजय प्राप्त करके देवताओं को स्वर्ग से भगाया। मगर बलि एक महान दानी था। विष्णु ने बौने ब्राह्मण का रूप धारण कर बलि से तीन क़दमों की जगह माँगी। बलि ने खुशी से दे दी। इस पर वामन ने एक क़दम से पृथ्वी को तथा दूसरे क़दम से आकाश को माप लिया और तीसरे क़दम के लिए जगह न पाकर बलि के सर पर पैर रखकर उसे पाताल लोक में दबा दिया।
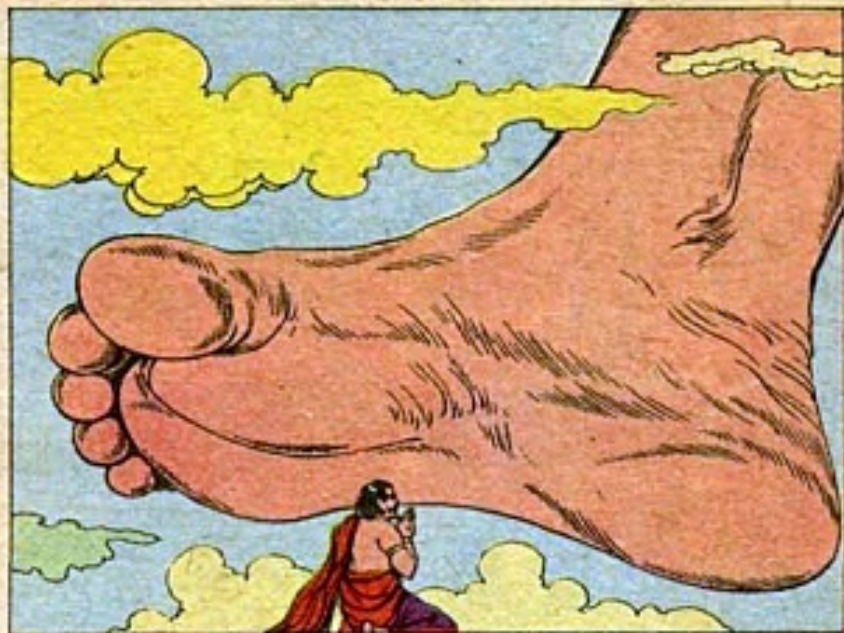
एक समय क्षत्रिय अभिमान में आकर मुनियों तथा ऋषियों को सताने लगे। उस वक्त विष्णु ने परसुराम नामक ऋषि पुत्र के रूप में जन्म धारण करके इक्कीस बार क्षत्रियों का अंत किया।

इसके बाद राम ने अवतार लेकर जनता के आदर्श पुरुष के रूप में जीवन-यापन किया। पितृ वचन का पालन, भातृ प्रेम और आदर्श पूर्ण राज्य शासन राम के विशिष्ट गुण हैं। वे एक महान वीर भी थे।
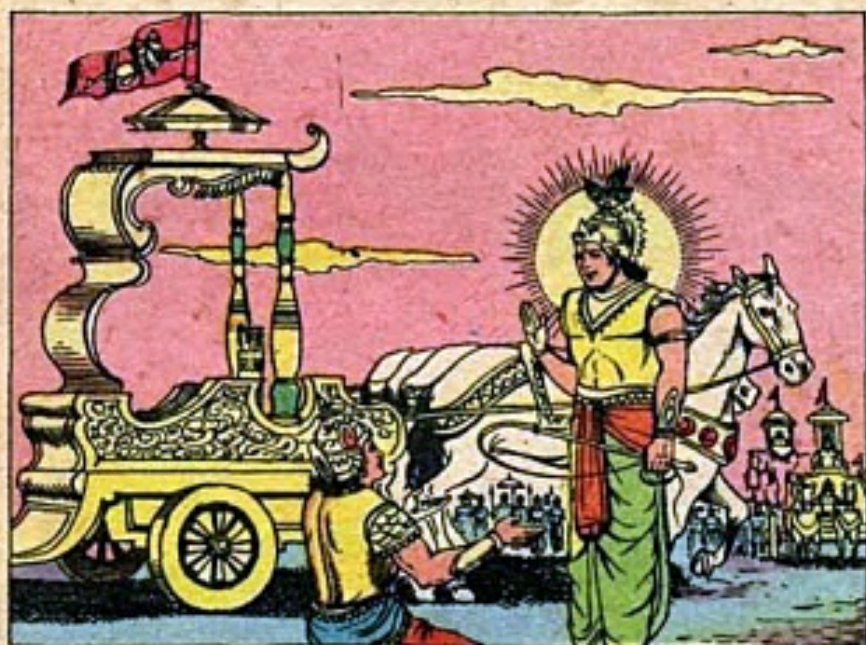
इसके बाद विष्णु ने कृष्णावतार लेकर असत्य की पराजय और सत्य की विजय प्राप्त कराई। कृष्ण ने अर्जुन को जो गीतोपदेश दिया था, वह समस्त प्रजा के लिए मार्गदर्शक बन गया।

विष्णु ने बुद्ध के रूप में अवतार लेकर जनता को मुक्ति का मार्ग और अहिंसा का महत्व समझाया। जीवन में उत्पन्न होनेवाले समस्त प्रकार के कष्टों का कैसे सामना करना है, इसे बुद्ध ने बता दिया।

मानवों में अब तक पैशाचिक वृत्ति नष्ट नहीं हुई है। इसलिए विष्णु भविष्य में कल्कि का अवतार लेकर मानव के भीतर की दुष्ट शक्तियों का निर्मूलन कर पृथ्वी पर वे आदर्श जीवन की स्थापना करनेवाले हैं।

राज्य का हित

काशी राज्य के राजा सूर्यवर्मा के बहुत समय बाद एक संतान हुई। उस लड़की का नामकरण रूपवती किया गया और लाड़-प्यार से पाला। उसके युक्त वयस्का होने पर राजा ने उसके विवाह के बारे में सोचा। राजा के रिश्तेदारों में रूपवती के योग्य तीन युवक थे। वे क्रमशः अजय, विजय और सुधीर। तीनों ने रूपवती के साथ विवाह करने की अपनी कामना राजा को सूचित की।

सूर्यवर्मा ने तीनों युवकों को बुलवाकर समझाया—"तुम तीनों एक वर्ष तक देशाटन करके राज्य के हित के लिए उपयोगी विद्याएँ प्राप्त कर लौट आओ। जिसकी विद्या मुझे सब से श्रेष्ठ मालूम होगी, मैं उसके साथ रूपवती का विवाह करूँगा।"

तीनों युवक तीन दिशाओं में अलग-अलग चले गये और एक वर्ष के पूरा होते ही लौट आये। राजा ने प्रत्येक को अलग बुलवाकर पूछा—"तुमने कौन सी विद्या प्राप्त की है?"

अजय ने राजा से कहा—"महाराज! मैंने एक अद्‌भुत मंत्र सीख लिया है। उस मंत्र का जाप करने से बड़ा भूकंप होगा। शत्रु जब हम पर हमला करेगा उस वक़्त यह मंत्र हमें अच्छी तरह से काम देगा।"

राजा ने पूछा—"पर यह बताओ कि हमारी आवश्यकता की पूर्ति हो जाने पर उस मंत्र का उपसंहार कैसे करना होगा?" अजय का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसने कहा—"महाराज! यह मंत्र मैं नहीं जानता हूँ।"

विजय ने बताया कि उसने भी एक अपूर्व मंत्र सीख लिया है, उसके जापने से अपार वर्षा होगी, नदियों में बाढ़ आएगी और जलप्रलय भी होगा।

हरिकृष्ण मिश्र

राजा ने उससे भी यही सवाल पूछा— "उसका उपसंहार करने के लिए क्या करना होगा?" विजय ने बताया कि वह नहीं जानता है।

सुधीन ने कोई अपूर्व विद्या नहीं सीखी। लेकिन उसने एक बात ज़रूर जान ली। वह यह कि सूर्यवर्मा के शासन में कई त्रुटियाँ हैं। इसलिए शासन को सुधारने के लिए वह कुछ सलाहें दे सकता है।

इस पर सूर्यवर्मा ने नाराज़ हो सुधीर को कारागार में भेजा। तब अजय और विजय को बुलाकर कहा—"तुम दोनों ने जो विद्याएँ प्राप्त की, वे वाकई अपूर्व हैं। पर तुम दोनों में से एक ही को रूपवती चुन लेगी।" इन शब्दों के साथ राजा ने दोनों को अपने साथ मध्यपान करने का निमंत्रण दिया।

मध्यपान करते ही अजय और विजय मर गये। उस मध्य में जहर मिलाया गया था। इसे देख मंत्री ने राजा से पूछा—"महाराज! यह कैसा अन्याय है?"

राजा ने निश्चल स्वर में समझाया— "मैंने राज्य के हित की विद्याएँ सीख आने के लिए इन दोनों को भेजा था, मगर ये दोनों हिरण्याक्ष और हिरण्यकश्यप से भी बढ़कर भयंकर रूप से विश्व में हलचल मचानेवाली विद्याएँ सीख आये। इनके निर्मूलन से बढ़कर विश्व के लिए कोई दूसरा उपकार न होगा।"

इसके बाद राजा ने कारागार से सुधीर को बुलवाकर कहा—"तुम्हारा कहना बिलकुल सच है। मेरे शासन में काफ़ी त्रुटियाँ हैं। उन्हीं का पता लगवाने के लिए ही मैंने तुम तीनों को देशाटन पर भेजा था। यदि तुम शासन को सुधारने के उपाय बता सकोगे तो मैं समझूँगा कि तुम राज्य का शासन करने योग्य व्यक्ति हो! तब तुम्हारे साथ रूपवती का विवाह करूँगा।"

आखिर सुधीर के सुझावों से प्रसन्न हो राजा ने उसके साथ वैभवपूर्वक रूपवती का विवाह किया।"

दोस्ती में दगा

राम और भीम नामक दो गृहस्थ गहरे दोस्त थे। दोनों की कमाई बराबर की थी, फिर भी राम अपनी कमाई पर संतुष्ट न था। एक बार भीम ने राम के हाथ दस रुपये देकर उसे सुरक्षित रखने को कहा।

एक साल बाद भीम को रुपयों की जरूरत आ पड़ी। उसने राम से अपने रुपये माँगा। राम ने सोचा कि भीम ने जब उसे रुपये दिये, तब कोई गवाह न था। इसलिए लोभ में आकर उसने कहा—"मुझे तो ऐसा याद नहीं पड़ता कि तुमने मुझे रुपये दिये हैं, कोई इसके गवाह हो तो बुला लाओ।"

राम की दुर्बुद्धि को भांपकर भीम ने पटेल के यहाँ जाकर शिकायत की, पटेल ने राम को बुलाकर पूछा। राम ने बताया कि उसे भीम ने रुपये दिये नहीं है।

इस पर पटेल ने कहा—"राम, भीम तुम्हें जब रुपये दे रहा था, उस वक्त बीस लोगों ने इसे देखा है।"

राम घबराहट में आकर अपना दगा आप ही प्रकट करते हुए बोला—"अजी, आप यह क्या कह रहे हैं? मैंने जब भीम से रुपये लिये, तब वहाँ पर कोई न था।"

—यशवंत राव

सरोजा के पिता ने संक्रांति पर्व पर उसे कहला भेजा कि वह अपने पति को लेकर ज़रूर चले आवे। पर सरोजा के पति को दफ़्तर से छुट्टी नहीं मिली, इसलिए वह जा नहीं पाया। सरोजा अकेली शादी के चार साल बाद अपने मायके चल पड़ी।

सरोजा का पति सुंदर गरीब है। सरोजा की दीदियों का विवाह अमीर युवकों के साथ हुआ था। सरोजा अपनी शादी के बाद पहली बार मायके जा रही थी, इसलिए उसने अपने पिता के लिए एक धोती और माँ के लिए चोली का कपड़ा खरीदा।

मायके पहुँचने पर माँ ने आगे बढ़कर सरोजा को अपने गले नहीं लगाया। सिर्फ़ यही बोली–"आओ बेटी! क्या सुंदर नहीं आये?" तब वह अपने काम में लग गई। उसकी दीदियाँ माँ को घेरकर शहरों की विशेषताएँ बतला रही थीं। सरोजा को देख हँसते हुए बोलीं–"अरी सरोजा! तुम्हारे पति की कमाई ईद के चांद के बराबर है? या कुछ तरक्की भी हुई है? या तुम्हें फाका रखता है!"

सरोजा का दिल कचोट उठा। फिर भी मुस्कुराने का अभिनय करते उसने अपनी दीदियों के सवालों के जवाब दिये। तब हाथ-पैर धोकर जा बैठी। उसने सोचा कि यह तो अपना ही मायका है यहाँ पर आदर-प्रतिष्ठा की बात सोचना ठीक नहीं है।

भोजन के वक़्त सरोजा की दीदियों ने मिठाइयाँ माँग-माँग कर खा लीं, पर सरोजा बार-बार माँग न पाई। उसका न माँगना ही अच्छा था। क्यों कि उसकी माँ ने अपनी बड़ी बेटियों को दुबारा लड्डू

सरोजिनी अवस्थी

परोसते वक्त उससे यह पूछा तक नहीं– "बेटी, तुम्हें भी एक क्या और लड्डू परोस दूं?"

उस दिन रात को सरोजा की दीदियों के सोने के लिए चारपाइयों का इंतज़ाम किया गया। मगर सरोजा अपना आँचल बिछाकर फ़र्श पर ही सो गई।

संक्रांति के दिन सब के तैल स्नान करने के बाद बचे रीठे से सरोजा ने भी सिर-स्नान किया।

इसके बाद सरोजा ने अपने पिता के वास्ते लाई गई नई धोती बक्से में से निकाली, सब की आँख बचाकर पिता के हाथ थमाते बोली–"बापू! मैं इसे आपके वास्ते लाई हूँ, ले लीजिएगा।"

सरोजा के पिता ने चुपचाप धोती लेकर निरीह भाव से अलगनी पर डाल दी, घर से बाहर जाते हुए बोला–"लगता है, सब कोई खाने बैठे हैं, तुम भी जाकर खाना खा लो।"

सरोजा निराशा भरी दृष्टि अलगनी की ओर डाले जड़वत खड़ी थी, तब उसकी माँ उधर से आ निकली। उसके वास्ते लाई गई चोली का कपड़ा सरोजा अपनी माँ के हाथ देना चाहती थी, तभी उसने देखा कि उसकी माँ के हाथ में रेशमी साड़ी है। उसने बक्सा खोलकर रेशमी साड़ी उसमें सुरक्षित रख दी।

"माँ, यह मैं तुम्हारे वास्ते लाई हूँ।" ये शब्द कहते सरोजा ने चोली का कपड़ा

अपनी माँ के हाथ धर दिया। माँ ने उसे अपने हाथ ले उस पर दृष्टि तक डाले बिना अलगनी पर फेंक दी। उसके बाद सरोजा ने देखा कि उसकी माँ ने चोली के कपड़े को धोबिन के हाथ दी और पिता के वास्ते लाई गई धोती किसी और को। अब सरोजा के दिल में अच्छी तरह से यह बात घर कर गई कि उस घर में वह एक पराई नारी है। अब वह ज़्यादा दिन अपने मायके में बिता न पाई, पर्व के दूसरे ही दिन अपने माता-पिता और दीदियों से विदा लेकर अपने ससुराल चली गई।

अपने पति को देखते ही सरोजा का दुख फूट पड़ा। उसने रोते-रोते अपने मायके का सारा हाल कह सुनाया।

सुंदर ने प्रसंग बदल कर सरोजा को तसल्ली देते हुए सरोजा के द्वारा लाई गई गठरी खोल दी। उसमें सरोजा के कपड़ों के नीचे एक रेशमी साड़ी और डिब्बे में लड्डू भरे थे। उसमें एक पुर्जा भी था जिसमें यों लिखा हुआ था: "बेटी सरोजा, तुम मुझे माफ़ कर दो। गत चार साल से हमारे यहाँ बिलकुल फसल नहीं हुई। सूखा पड़ा था। तुम्हारी दीदियाँ अपने पतियों की आँख बचाकर हमारे परिवार का पोषण कर रही हैं। हम तुम्हारी दीदियों के बराबर तुम्हारा भी आदर करते तो हमारा जो कुछ जीविका का आधार है, जाता रहेगा। इसी डर से हमने तुम्हारे साथ ऐसा व्यवहार किया। तुम्हारी आर्थिक स्थिति अच्छी न होने पर भी तुम मेरे और तुम्हारे पिता के लिए कपड़े लाई हो। यह तुम्हारी उदारता थी। मगर तुम्हारी दीदियों को संतुष्ट करने के लिए हमने ऐसा अभिनय किया कि हम उन्हें और लोगों के हाथ सौंप दिया है। तुम्हारी दीदियों के जाते ही वे लोग उन कपड़ों को हमें वापस ला देंगे। तुम लोग जहाँ भी रहो, खुश रहो, कुशल रहो, यही हमारी कामना है—तुम्हारी माँ!"

असली चोर

रुद्रपूर के राजा जयपाल की पत्नी रूपमती के पास अपूर्व गुलाबी रंग की मोतियों की माला थी। वह सदा उसे पहनती, लेकिन सोते वक़्त उसे अपने तकिये के नीचे छिपा रखती थी। वह माला उसे बहुत ही प्यारी थी।

जयपाल भाग्यशाली था। उसकी पत्नी रूपमती बड़ी ख़ूबसूरत थी। उसका लड़का शक्तिपाल जो दस साल का था–बड़ा सुंदर था। जनता जयपाल को दिल से चाहती थी, राज्य संपन्न था।

एक दिन जयपाल अपने परिवार के साथ शिकार खेलने गया। उसी दिन से उसकी तकलीफ़ों की शुरूआत हुई। दुपहर तक शिकार खेलने के बाद सब लोग आराम कर रहे थे, तब एक भयंकर तूफ़ान आया। शिकार खेलने जो हाथी व घोड़े ले जाये गये, वे रस्से तोड़कर भाग गये। राजा का रथ एक पेड़ से टकरा गया जिससे उसका एक पहिया टूट गया। इस पर जयपाल एक एक घोड़े पर सवार हो गया। वह भड़क कर इच्छानुसार भागता गया। रास्ते में कम ऊँचीवाली एक डाल राजा के भाल से पर बड़ी चोट आई और घाव से ख़ून बहने लगा। राजा घोड़े से गिर पड़ा और पैदल एक नदी के पास पहुँचा। नदी में बाढ़ आ गई थी। राजा तैरना जानता था, लेकिन उसके घाव से बहुत-सा ख़ून बह गया था, इस कारण वह कमज़ोर हो गया और तैरकर नदी को पार न कर पाया, नदी में बहते बेहोश हो गया।

जब वह होश में आया तब वह एक पत्थर से बने मकान में था। एक सुंदर कन्या जो साधारण वस्त्र पहने हुई थी, उसके पैर दबा रही थी।

श्री. ए. सी. सरकार, जादूगर

राजा को आँखें खोलते देख वह युवती प्रसन्न हो बोली–"अब आप बच गये हैं। चार दिनों से हम लोग आपकी हालत पर परेशान थे। हमारे घाट में जब आप दिखाई दिये, तब आप अंतिम सांस गिन रहे थे। इस वक़्त आप सोनपुर जंगल के राजा फकीरा के राजमहल में हैं, मैं राज-वैद्य की पुत्री हूँ। मेरा नाम मंजरी है। आपके पूर्ण रूप से स्वस्थ होने में अभी कम से कम एक महीना लगेगा। मेरे पिता जो जड़ी बूटियों की दवा दे रहे हैं, उसके द्वारा आप ज़रूर चंगे हो जायेंगे। आपकी सेवा टहल करने के लिए मैं रात-दिन आप ही के पास रहूँगी। न मालूम क्यों, जब से मैंने आप को देखा, तभी से मेरा मन आप के वशीभूत हो गया है। इसीलिए मैं खुद आप की सेवा कर रही हूँ। लेकिन हम नहीं जानते कि आप कौन हैं? आप का पूरा परिचय मालूम हुआ होता तो हम अब तक आप के परिवारवालों को इसकी खबर कर देते।"

इस बीच मंजरी का पिता और फकीरा आ गये। फकीरा ने कहा–"हे युवक! तुम्हारे चेहरे-मोहरे और पोशाक देखने से तुम एक अच्छे परिवार के लगते हो! तुम अपना पता बतला दोगे तो हम तुम को तुम्हारे घर भेज देंगे।"

जयपाल ने सोचा कि उसका वास्तविक पता देने से खतरे से खाली नहीं है। उसने बताया–"मेरे पिता विक्रमपुर के एक व्यापारी हैं, मैं अपने काम पर जाते हुए रास्ते में खतरे में फँस गया।"

जयपाल की बातों पर सबने यक़ीन किया। मंजरी दिन ब दिन उसके दिल में स्थान पाने लगी। उसकी सेवाओं से जयपाल का दिल कृतज्ञता से भर उठा। यदि वह उस जगह से बचकर जाना चाहे तो सिर्फ़ मंजरी ही मदद दे सकती है। वह दिल से जयपाल को प्यार करती थी, इसके सबूत में पर्याप्त घटनाएँ थीं। लेकिन उसके बचकर भाग जाने के बाद मंजरी

खतरे में फँस जाएगी। यदि मंजरी को कोई आपत्ति न हो तो उसे अपने साथ ले रुद्रपूर जाना होगा। असली स्थिति से परिचय पाने पर मंजरी के साथ शादी करने में रूपमती आपत्ति न उठायेगी।

जयपाल के स्वस्थ हो जाने पर उसने मंजरी से कहा–"मंजरी! मेरा अपना परिवार है। तुम्हारे परिवार में यहाँ सदा के लिए रहना मेरे लिए संभव नहीं है। मुझे यहाँ से जाना होगा। मगर तुम्हारी सहायता की जरूरत है। मेरे जाने पर इसका दोष तुम पर लादेंगे। मैं नहीं जानता कि तुम्हें तब कैसी सज़ा मिलेगी?"

"मेरी बोटी-बोटी काट के रख देंगे। लेकिन मैं यह सजा ख़ुशी से भोग लूँगी। क्योंकि मैं दिल से आप को प्यार करती हूँ। मैं सिर्फ़ यही चाहती हूँ कि आप अपने परिवार के साथ ख़ुश रहे।" मंजरी ने कहा।

"मंजरी! मैं जानवर नहीं हूँ, मनुष्य हूँ। अगर तुम मुझसे प्यार करती हो तो मैं भी तुमसे प्यार करता हूँ। तुम भी मेरे साथ हमारे देश में चली आओ। मैं अपनी पत्नी को लेकर तुम्हारे साथ विवाह करूँगा। क्या इसमें तुम्हें कोई आपत्ति है?" जयपाल ने पूछा।

मंजरी ने इसे ख़ुशी से स्वीकार कर लिया।

एक दिन अंधेरी रात में दोनों चल पड़े। वे बड़ी मुश्किल से अपनी यात्रा समाप्त

कर रुद्रपूर पहुँचे। तब जयपाल ने कहा–"मंजरी! मैंने आज तक सच्ची बात तुमसे नहीं बताई, मुझे क्षमा कर दो। मैं इस रुद्रपूर का राजा हूँ।"

"अगर मैंने अजजान में कोई गलती की हो तो मुझे क्षमा कर दीजिएगा।" मंजरी ने निवेदन किया।

रूपमती ने अनिच्छापूर्वक ही अनुमति दी, तब जयपाल और मंजरी का विवाह संपन्न हुआ।

मंजरी सभ्यता से परिचित थी। राजमहल में वह सबके साथ अच्छा व्यवहार करती थी। राजकुमार शक्तिपाल मंजरी से हिल-मिल गया। मंजरी उसकी अपसे निजी पुत्र के समान देख-भाल करने लगी। राजमहल में रूपमती से बढ़ कर मंजरी का ज्यादा आदर होते देख रूपमती ईर्ष्या से भर उठी। एक दिन नींद से जागते ही उसने अपना मोतियों का हार छिपाकर यह अफ़वाह उड़ाई कि किसीने उस हार की चोरी की है। वह किसी भी उपाय से मंजरी को अपराधिनी ठहराना चाहती थी।

रानी के हार के खोने का समाचार पाकर पहरेदार घबड़ा गये। इस पर मंजरी ने कहा–"मैं चोर का पता लगाऊँगी, मैं अनेक मंत्र-तंत्र जानती हूँ। चोर को पकड़ने के पहले मैं आज ही अपनी मंत्र-शक्ति का प्रदर्शन करूँगी! सब लोग राजमहल के आंगन में आ जाओ।"

उस दिन दुपहर को मंजरी ने अपने पति को एक योजना बताई। दुपहर को राजमहल का आंगन लोगों से भर गया। मंजरी अपनी आँखों पर पट्टी बांधकर वहाँ आ पहुँची। राजा के सामने एक मेज पर छोटी-बड़ी अनेक चीज़ें रखी गई थीं। मंजरी के कहे अनुसार राजपरिवार के लोग एक-एक करके आये और एक-एक चीज़ को छू लिया। यदि कोई किसी चीज को छू देते, तब राजा पूछ बैठते–"मंजरी, बताओ, इस आदमी ने किस

चीज़ को छू लिया है, वह अंडा है, छतरी है या लोटा ?"

मंजरी ने कहा–"लोटा है।" यह बात सच थी। दूसरी बार राजा ने पूछा–"मंजरी, अब छूनेवाली चीज क्या है? पंखा है, थैली है? लोटा है, अंडा है? गिलास, दवात, मोमबत्ती या पर ?"

"मोमबत्ती है !" मंजरी ने झट कह दिया। यह बात भी सच थी।

इस प्रकार मंजरी ने हर बार सच बताई। सब लोग उसकी मंत्र-शक्ति पर विस्मय में आ गये।

अंत में मंजरी बोली–"कल शाम के अंदर अगर हार नहीं मिला तो मैं चोर को पकड़ लूंगी। इससे भी बढ़कर मंत्र-शक्तियाँ मेरे पास हैं।"

उस दिन शाम को रूपमती गुप्त रूप से मंजरी के पास पहुँची और बोली–"मंजरी! तुम हमारे पति की शपथ लेकर इस रहस्य को छिपाने का वादा करोगी तो मैं तुम्हें एक बात बताऊँगी।"

"अच्छी बात है! मैं ऐसा ही शपथ लेती हूँ! बताइये!" मंजरी ने कहा।

"बहन! मुझे क्षमा करो! मैं ही वह चोर हूँ! ईर्ष्या में पड़कर मैंने चोरी का इलज़ाम तुम पर थोपना चाहा। मैं अपनी भूल के लिए पछता रही हूँ। तुम जैसी योग्य औरत से ईर्ष्या करना मूर्खता है।" रूपमती ने कहा। इसके बाद दोनों ने आलिंगन किया। दोनों की आँखों से आनंद बाष्प गिर पड़े।

मंजरी ने जो इंद्रजाल किया था, उसका आधार क्या है? पहले ही इस बात का इंतज़ाम हो गया था कि अगर कोई किसी चीज़ को छू लेता है तो राजा कई चीज़ों का नाम लेते हुए असली चीज़ का नाम लेने के पहले एक काली चीज़ का नाम लेंगे। इसी इंतज़ाम के मुताबिक़ राजा ने लोटा के पहले छतरी और मोमबत्ती के पहले दवात का नाम लिया था। दूसरे दिन रूपमती ने यह घोषणा की कि उसका खोया हुआ मोतियों का हार मिल गया है।

हीरे की अंगूठी

माहेश्वरीलाल वैसे अपने वास्ते दिल खोलकर खर्च कर देता था, मगर दूसरों के वास्ते एक कौड़ी भी खर्च करना होता तो उसका दिल तड़प उठता। खासकर किसी के घर कोई मांगलिक कार्य होता और वे चाहे जितने भी निकट संबंधी या मित्र होते, बुलावा पाकर इस ख्याल से वह खुद उसमें सम्मिलत नहीं होता, बल्कि उपहार देने के डर से अपनी पत्नी और बच्चों को भिजवा देता।

अगर कोई यह सवाल कर बैठता– "माहेश्वरीलाल क्यों न आये?" उसकी पत्नी तपाक से जवाब दे बैठती–"वे तो उपहार खरीदने बाजार गये हैं, लौटते ही होंगे।"

उत्सव समाप्त हो जाने पर भी कहीं उसका पता न लगता।

उसकी पत्नी खीझ का अभिनय करते यही कहती–"ये तो हमेशा लापरवाह रहते हैं। दोस्त मिल गये तो सारी बातें भूल जाते हैं।" फिर अपने बच्चों के साथ खाना खाकर पति के वास्ते मिठाइयाँ पोटली बांधकर घर चल देती।

सब कोई यह बात जानते थे कि यह तो माहेश्वरीलाल का नाटक है, यही कारण है कि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से माहेश्वरीलाल का मजाक़ उड़ाया करते थे।

एक बार माहेश्वरीलाल के एक निकट मित्र की पुत्री की शादी पड़ी। इस बार शादी में भाग लेने से वह बच नहीं सकता था। पत्नी और बच्चों को भेजने के लिए रिश्तेदारों के घर की शादी न थी।

इसलिए उसने अपनी पत्नी की सलाह माँगते हुए कहा–"सुनो, मेरे दोस्त शादी से दो दिन पहले ही आकर शादी के कामों में मदद पहुँचाने को कहते हैं। कम से कम शादी के वक़्त तक भी सही,

न पहुँच पाऊँ तो भद्दा होगा, शादी में जाऊँ तो कुछ न कुछ उपहार देना पड़ेगा, क्या करूँ?"

"तुम्हारी खोपड़ी में गोबर भरा हुआ है। खाली बक्से पर रंगीन कागज़ लपेट कर भेंट दे तो काम चल जाएगा। शादी की उस भीड़ में किसने कौन सा उपकार दिया, इसे कौन देखने जाएगा?" सब कोई यही समझेंगे कि तुमने भी उपहार दे दिया है।" माहेश्वरीलाल की पत्नी ने समझाया।

यह सलाह माहेश्वरीलाल को पसंद आई। शादी में जाते वक़्त उसने गत्ते की एक पेटी में कई पत्ते भर दिये, उनके बीच एक सुंदर फूल रखा, पेटी के चारों तरफ़ रंगीन कागज़ लपेटकर ठाठ से उसे अपने साथ ले गया।

लेकिन माहेश्वरीलाल की पत्नी ने जैसे सोचा था, वैसे नहीं हुआ। कभी किसी शादी में सम्मिलत न होनेवाले माहेश्वरी लाल पर और उसके हाथ की पेटी पर सबकी आँखें जमी थीं। क्योंकि माहेश्वरी लाल का उपहार देना ही एक अनोखी घटना थी।

भेंट आदि कार्यक्रम के बाद सब कोई दावत खाने बैठ गये। माहेश्वरी लाल भी इस तरह जाकर पत्तल के सामने जा बैठा, मानो अपने सर का उसने बड़ा बोझ उतार लिया हो! उसे लड्डुओं की गंध बहुत भा रही थी।
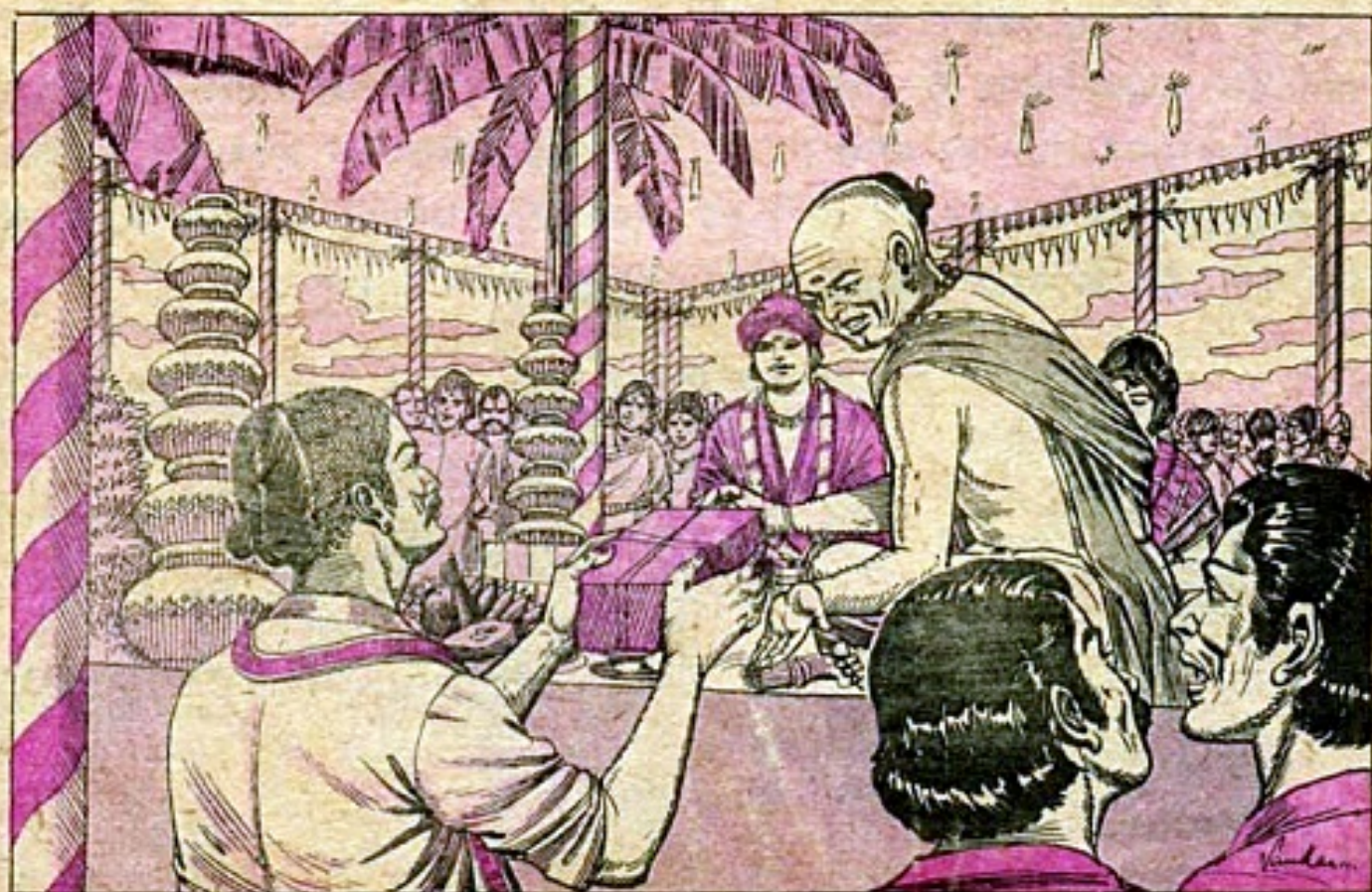
माहेश्वरी की पंक्ति में बैठे एक दोस्त ने ऊँचे स्वर में मजाक़ करते कहा–"उफ़! अगर मुझे मालूम होता तो कि माहेश्वरी लाल ऐसा बढ़िया उपहार देंगे तो मैं अपनी बेटी की शादी कभी कर देता।"

ये बातें सुन लड्डू को अपने मुँह में रखनेवाले माहेश्वरीलाल के हाथ-पैर ठण्डे हो गये। इसका मतलब था कि उस दोस्त ने माहेश्वरीलाल की पेटी खोलकर देख लिया है। उसे लगा, मानो उसका सर काट दिया गया है। यह सलाह देनेवाली अपनी पत्नी पर माहेश्वरीलाल का गुस्सा उतर आया।

एक-दो लोगों ने जिज्ञासापूर्वक पूछा–"माहेश्वरीलाल आखिर कौन सा उपहार लाये हैं?"

"अभी मैं यहाँ लाकर दिखा देता हूँ।" ये शब्द कहते वह व्यक्ति उठकर चला गया और माहेश्वरीलाल के द्वारा भेंट दी गई पेटी को साथ लेकर आ पहुँचा।

माहेश्वरीलाल के चेहरे पर काटो तो खून नहीं, सब के सामने उसकी इज्जत धूल में मिलने जा रही है। सब कोई उसे धिक्कारेंगे। इस तरह सब के बीच अपमानित होने के बदले शादी में न आना ही अच्छा होता।

माहेश्वरीलाल को लगा कि उसके हाथ के लड्डू से दुर्गंध आ रही है।

"देखिये! माहेश्वरीलाल ने दुलहिन को कैसी क़ीमती हीरे की अंगूठी भेंट की है!" ये शब्द कहते उस मित्र ने जादू करनेवाले की भांति पेटी में से एक अंगूठी निकाली।

माहेश्वरीलाल उसे देख अपने दिल के भीतर के आर्तनाद को ज़बर्दस्ती रोक पाया। वह सचमुच उसके हाथ की अंगूठी थी। जब वह पेड़-पौधों से पत्ते तोड़ रहा था, तब उसकी उंगली की अंगूठी फिसलकर पेटी में गिर गई होगी। पर उसे इस बात का ख्याल ही न था।

माहेश्वरीलाल को अपने दुख के साथ सबके बीच अपमान से बचने के कारण आखिर संतोष ही हुआ।
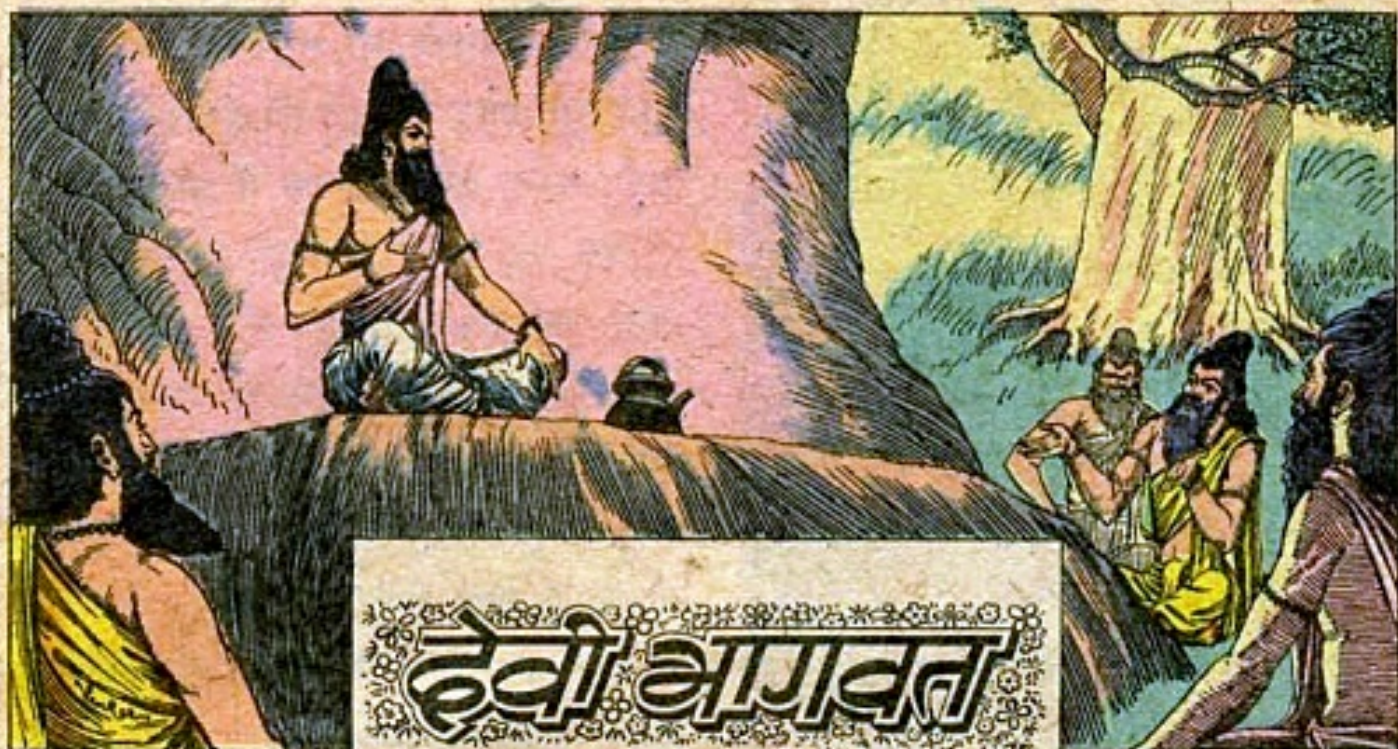
सूतमुनि के वचन सुननेवाले मुनियों ने बीच में दखल देते हुए कहा–"हमने सुना है कि ब्रह्मा, विष्णु और महेश क्रमश: सृष्टि, स्थिति और लय के कारक हैं, उन तीनों में विष्णु सर्वोत्तम हैं। ऐसे महाविष्णु को जब योग निद्रा ने घेर लिया तब उनकी शक्ति और तेज कहाँ गये? आदि शक्ति को महाविष्णु से बढ़कर शक्ति कैसे प्राप्त हो गई? नारद जैसे महानुभावों ने विष्णु को ही समस्त कार्यों का कारणभूत बताया है, पर आप तो आदि शक्ति को ही समस्त कार्यों का कारणभूत बता रहे हैं, हम वास्तविक बात समझ नहीं पा रहे हैं। कृपया स्पष्ट कीजिए!"

शक्ति का स्वरूप

इसके उत्तर में सूत मुनि ने यों समझाया: "हे महा मुनियो, नारद मुनि इत्यादि आदि शक्ति के प्रभाव को सही ढंग से समझ न पाये और श्रीमहाविष्णु को ही सर्व शक्तिमान मानकर भ्रम में पड़ गये। इसी प्रकार कुछ लोग शिवजी को पर देवता मानते हैं तो कुछ लोग सूर्य को, कुछ और लोग अग्नि, चन्द्रमा, इन्द्र आदि को मान माया में फंसकर तरह-तरह के विचार रखते हैं। चाहे जो कोई भी कुछ प्रमाण बतावे, पर उन सब प्रमाणों के अतीत 'पर शक्ति' ही वास्तविक शक्ति है जो विष्णु में, शिवजी में, सूर्य, वायु तथा अग्नि में भी दिखाई देती रहती है।"

२. मधु-कैटभों का वध

इस प्रकार शक्ति द्वारा ज़ागृत होकर श्रीमहाविष्णु ने ब्रह्मा को देख पूछा-"वत्स! तुम तपस्या करना त्यागकर इधर क्यों आये?"

ब्रह्मा ने उत्तर दिया-"आगे मैं तपस्या कैसे कर सकूंगा? आप के कानों से मधु-कैटभ नामक दो राक्षस पैदा होकर मेरा वध करने की धमकी दे रहे हैं।"

"तुम बस इसी चीज़ को लेकर डरते हो? मैंने कैसे-कैसे भयंकर राक्षसों का वध नहीं किया है?" विष्णु यों कह ही रहे थे, तभी वे दोनों राक्षस वहाँ पर दौड़े आये और बोले-"ब्रह्माजी! तुम भागकर यहाँ छिप गये हो? मरनेवाले तुम अकेले न मरकर इनको भी खतरे में क्यों डालते हो? तुम अगर वीर हो तो हमारे साथ युद्ध करो, वरना हमारी शरण में आ जाओ।"

इस पर विष्णु ने ब्रह्मा को अपने पीछे आने का संकेत किया और राक्षसों से कहा-"तुम लोग घमण्ड में आकर क्या क्या बक रहे हो? मैं अभी तुम लोगों का घमण्ड चूर कर देता हूँ।" ये शब्द कहते वे युद्ध के लिए तैयार हो गये।

देवी आसमान से यह दृश्य देख रही थीं। उधर श्रीविष्णु और मधु ने युद्ध प्रारंभ किया। समुद्र में उफान आ गया। मधु को थका देख कैटभ ने विष्णु के साथ मल्ल युद्ध प्रारंभ किया। आखिर दोनों राक्षस मिलकर जब विष्णु के साथ लड़ने लगे, तब विष्णु की ताक़त जवाब देने लगी। उनकी समझ में न आया कि उन राक्षसों को कैसे पराजित करें?

विष्णु यों सोच ही रहे थे, तब राक्षसों ने उन्हें ललकारा-"हमारे साथ आप युद्ध करने की शक्ति नहीं रखते तो हमारी दासता को स्वीकार कर हमें प्रणाम कीजिए। वरना पहले आप का संहार करके तब ब्रह्मा का वध कर डालेंगे।"

इस पर विष्णु ने शांत स्वर में उत्तर दिया-"जो थके हुए हैं, जो युद्ध से विमुख हैं, जो भयभीत हैं और युद्ध में नीचे गिरे

हैं, उनका सामना करना वीरों का धर्म नहीं है। अलावा इसके तुम दो हो, मैं तो अकेला हूँ। मैं पल भर के लिए विश्राम करके तब युद्ध करूँगा।"

"अच्छी बात है! आप आराम कीजिए, इस बीच हम लोग भी विश्राम करेंगे।" राक्षसों ने कहा। उस समय विष्णु ने अपनी दिव्य दृष्टि के द्वारा यह जान लिया कि इन दोनों ने वर प्राप्त कर लिया है, तब सोचने लगे-"इन्हें स्वेच्छापूर्वक मृत्यु प्राप्त करने का वर प्राप्त है। इनका मैं कैसे वध करूँ?" यों विचार कर अंत में विष्णु ने जगदंबा का ध्यान किया-"माता, तुम्हारी सहायता के बिना मैं इन राक्षसों का संहार नहीं कर सकता। उल्टे ये ही लोग मेरा वध कर बैठेंगे। तुमने ही उन्हें वर प्रदान किया है। इनके मरने का भी उपाय तुम्हीं बतला दो।"

दीनतापूर्वक अपनी प्रार्थना करनेवाले विष्णु को देख देवी मुस्कुरा उठीं और बोलीं-"मैं इन राक्षसों पर अपनी माया फैला देती हूँ, आप इन्हें पराजित कीजिए!"

इस बीच राक्षसों ने विष्णु पर ताने कसे-"आप हारने की बात सोचकर डरते क्यों हैं? शूर-वीरों को विजय-पराजय दोनों प्राप्त होती हैं। तुम्हारे हाथों में न मालूम कितने राक्षस पराजित नहीं हुए?"

मधु-कैटभों का युद्ध

ये बातें सुन विष्णु क्रोध में आकर राक्षसों पर जूझ पड़े। वे खून उगलते विष्णु के वक्ष पर प्रहार करने लगे। विष्णु बेहोश से हो गये, उनकी देह से रक्त गिरने लगा। उस स्थिति में उन्होंने आकाश में देवी को देखा।

उसी समय देवी ने राक्षसों पर कामदेव के बाणों जैसी दृष्टि प्रसारित की। फिर क्या था, वे युद्ध की बात भूलकर मोहपाश में फँस गये। उस वक़्त विष्णु ने राक्षसों से कहा-"मैंने युद्ध विद्या में तुम्हारी बराबरी करनेवाले राक्षसों को नहीं देखा है। तुम्हारी युद्ध-कुशलता देख मुझे बड़ी

तुम ऐसे विशाल प्रदेश में हमारा वध करो जहाँ जल न हो! ऐसी हालत में ही हम तुम्हारे हाथों में मर जायेंगे।"

इस पर विष्णु ने मुस्कुरा कर अपनी जांघों का विस्तार करके कहा-"राक्षसो, आ जाओ।"

राक्षसों ने अपनी जांघों का विष्णु से ज्यादा विस्तार किया। स्पर्धा में आकर उभयपक्ष के लोग अपनी जांघों को विशाल बनाते गये। आखिर राक्षसों के शरीरों से विष्णु की जांघें ही विस्तार हो गईं। उस वक्त विष्णु ने अपने चक्र का स्मरण किया। चक्र ने आकर राक्षसों की गर्दनों को काट डाला। उनकी मेदा पानी में गिरकर एक टीले के रूप में उभर आई। उस समय से लेकर पृथ्वी "मेदिनी" और मिट्टी को न खानेवाली भी कहलाई।

प्रसन्नता हो रही है। तुम्हारी कोई इच्छा हो तो बतला दो, मैं उसकी पूर्ति करूँगा।"

देवी के प्रभाव से माया-मोहित राक्षस विष्णु की बातें सुन दर्प में आये और विष्णु की ओर तिरस्कारपूर्ण दृष्टि दौड़ाकर बोले-"ऊफ़! हम तुम से माँगनेवाले और तुम हमें वर देनेवाले? चाहे तो तुम्हीं हम से वर माँग लो, हम तुम्हें दे देंगे।"

इस पर विष्णु ने तपाक से पूछा-"तुम लोग अगर मेरे युद्ध को देख प्रसन्न हैं तो मेरे हाथों में मर जाओ।"

राक्षस दोनों घबड़ा गये, पर थोड़ी देर सोचकर बोले-"तुम अगर वादे के पक्के हो तो हमें वर देने की बात याद रखकर

व्यास की तपस्या

यहाँ तक कहानी सुनने के बाद मुनियों ने सूत महर्षि से पूछा-"संदर्भवश हमने अन्य बातें काफ़ी सुन लीं, मगर पुत्र-प्राप्ति के लिए तपस्या करनेवाले व्यास महर्षि की कहानी वैसी ही रह गई।"

इस पर सूत ने यों कहा:

नारद का बताया मंत्र जपते व्यास मुनि ने सुवर्ण गिरि पर कर्णिकार वन में तपस्या शुरू की। वे शक्ति को अपने

मन में घर कर तपस्या करने लगे। इस पर पृथ्वी और आकाश कांप उठे। इन्द्र भयभीत हो देवताओं को साथ ले शिवजी के पास पहुँचे और प्रार्थना की-"भगवन! व्यासमुनि भयंकर तपस्या कर रहे हैं। हम पर खतरा उत्पन्न होनेवाला है। हमारी रक्षा कीजिए!"

शिवजी ने उन्हें समझाया-"तपस्या करनेवालों की हानि नहीं करनी चाहिए! वे भी दूसरों का अपकार नहीं करते। व्यासमुनि पुत्र की कामना से शक्ति से युक्त मेरे वास्ते तप कर रहे हैं!" फिर व्यास मुनि के सामने प्रत्यक्ष हो उनकी इच्छा की पूर्ति का वरदान दे दिया। तब शिवजी की आज्ञा पाकर व्यास अपने आश्रम को लौट आये।

इसके बाद व्यास ने अरिणि का मंथन करके अग्नि पैदा की और सोचने लगे-"क्या इस अग्नि जैसे पुत्र को मुझे प्रदान करनेवाली कोई स्त्री है? फिर नारी तो बड़ा विघ्न डालनेवाली होती है!" तभी उन्हें आसमान में घृताचि दिखाई दी। उसके निकट कामदेव भी दिखाई दिये।

कामदेव के प्रभाव का शिकार होकर भी व्यास सोचने लगे-"यह तो मुझे धोखा देने के लिए आई होगी! इसके साथ सुख भोगने से कोई नुक़सान भी तो नहीं है? मगर इसको साथ रखने से मुनि शायद हँस पड़ेंगे! हाँ, उनके हँसने से बनता-बिगड़ता ही क्या है? क्या यह मेरे प्रति प्रेम रखते हुए मुझे सुख पहुँचायेगी? या प्राचीन काल में जैसे ऊर्वशी ने पुरूरव को विरह-वेदना में डाल दिया था, वैसे मेरे साथ भी करेगी?"

इस पर मुनि सूत की बातों को काटते बोले-"महामुनि, बताइये, पुरूरव कौन थे?" सूत ने आगे यों सुनाया :

बुध का जन्म

बृहस्पति की पत्नी तारा थी। वह बड़ी सुंदर थी। एक दिन वह चन्द्रमा के घर गई। चन्द्रमा उस पर मोहित हो

माता के समान है। ब्राह्मण की हत्या करनेवाला, शराबी, सोना चुरानेवाला, गुरुपत्नी पर मोहित होनेवाला और इन चारों के साथ मैत्री करनेवाला—ये सब पंच महा पापी हैं। क्या तुम्हें स्वर्ग की प्राप्ति होगी? इन्द्र तुम्हें दण्ड नहीं देंगे?"

इसके उत्तर में चन्द्रमा ने शांत स्वर में कहा—"क्या ब्राह्मणों को क्रोध करना उचित है? तारा तो कल-परसों यहाँ से चली ही जायेगी! क्या यह सदा मेरे ही साथ रहेगी? अगर रह भी गई तो इसमें दोष क्या है? इस छोटी-सी बात के लिए आपको दुःखी होने की क्या ज़रूरत है?"

उठा। तारा भी चन्द्रमा पर मोहित हो गई। दोनों के हृदय मिल गये। इस कारण तारा बहुत दिन तक चन्द्रमा के घर रह गई। कई दिन तक तारा के घर न लौटते देख उसे लिवा लाने के लिए बृहस्पति ने अपने एक शिष्य को चन्द्रमा के घर भेजा। पर तारा ने उसकी बात की परवाह नहीं की। इसके बाद बृहस्पति ने कई लोगों को चन्द्रमा के घर भेजा। पर कोई फ़ायदा न रहा। आखिर बृहस्पति क्रोधित हो चन्द्रमा के घर पहुँचे। उन्हें देख चन्द्रमा हँस पड़ा।

इस पर बृहस्पति ने चन्द्रमा को भला-बुरा सुनाया—"अरे दुष्ट! गुरुपत्नी

बृहस्पति चन्द्रमा के प्रश्नों का कोई जवाब दे न पाये। वे उसी वक़्त घर लौट आये और थोड़े दिन और अपनी पत्नी की प्रतीक्षा करने लगे। तिस पर भी तारा घर नहीं लौटी। बृहस्पति चिंता में पड़ गये। वे फिर चन्द्रमा के घर पहुँचे।" इस बार पहरेदार ने उन्हें भीतर जाने से रोका।

उस हालत में बृहस्पति ने उच्च स्वर में कहा—"अरे दुष्ट! तुम किस तरह अत्याचार करने पर तुले हुए हो? मेरी पत्नी को देखने से तुम मुझे रोक देते हो? मेरी पत्नी तुम्हारी बने और मैं उससे दूर रहूँ? देखो, मैं तुम्हें कैसे शाप देता हूँ?"
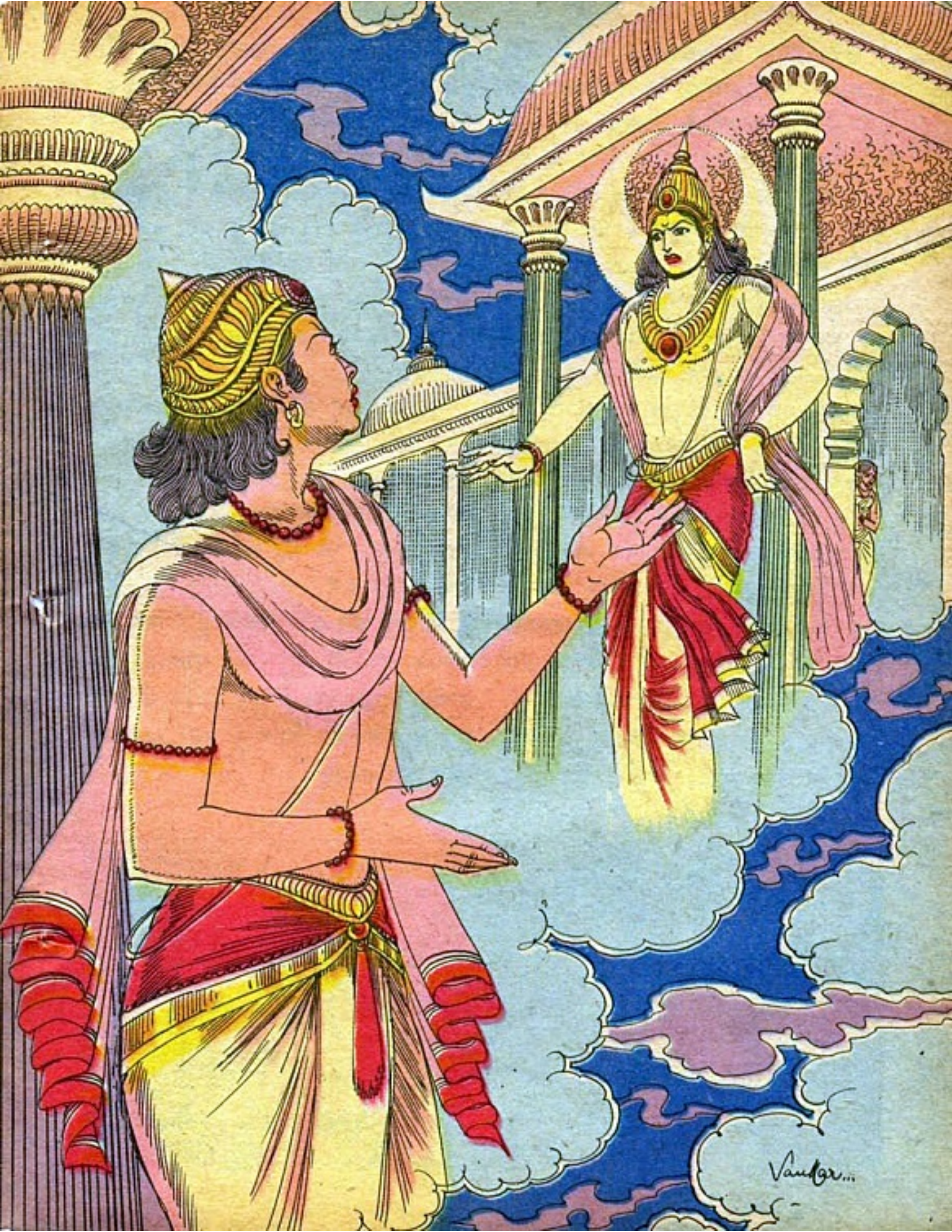
इसके उत्तर में चन्द्रमा ने कहा–"आप बार-बार अपनी पत्नी का नाम क्यों लेते हैं? समस्त प्रकार के लक्षणों से युक्त यह सुंदरी तारा आप जैसे दरिद्र के घर क्या रहने योग्य है? अगर आप पत्नी चाहते हैं तो उचित नारी के साथ विवाह करके सुखी रहिये! आपने समस्त शास्त्रों का अध्ययन किया, लेकिन क्या फ़ायदा? आप यह भी समझ न पाये कि औरत अपनी पसंद के पुरुष के साथ रहती है और जो उसे पसंद नहीं है, उसे त्याग देती है? मैं तारा को छोड़ नहीं सकता हूँ! अब आप जाइये! आप ईर्ष्या में पड़कर मुझे जो शाप देते हैं, वे मुझे लगनेवाले नहीं हैं। आप जो कुछ करना चाहते हैं, कर लीजिए!"

आखिर बृहस्पति विवश हो इन्द्र के पास चले गये। इन्द्र ने उनका स्वागत करके उचित आसन पर बिठाया और पूछा–"गुरुवर! आप दुखी क्यों हैं?"

बृहस्पति ने कहा–"चन्द्रमा ने मेरी पत्नी का अपहरण किया है। मेरे माँगने पर वापस करने से इनकार कर रहा है। मुझे अपनी पत्नी को वापस दिलवा दो।"

"गुरुदेव! आप चिंता न कीजिए! मैं आपकी पत्नी को छुड़वा देता हूँ! चन्द्रमा अगर हठ करेगा तो अपने वज्रायुध से उसका घमण्ड तोड़ दूंगा। क्या वह दुष्ट ऐसा तुच्छ काम कर बैठा है?" ये शब्द कहकर इन्द्र ने अपने एक दूत को बुलाया और उसे सारी बातें समझा कर चन्द्रमा के पास भेजा।

इन्द्र के दूत ने चन्द्रमा के पास पहुँच कर अनेक प्रकार से उसे समझाया। उपदेश दिये, तारा को मुक्त करने की सलाह दी। इस पर चन्द्रमा ने क्रुद्ध होकर कहा–"मैं भी जानता हूँ कि इन्द्र कैसे नीतिवान है? तारा मुझसे प्रेम करती है, मैं उन्हें कैसे छोड़ सकता हूँ? क्या मेरे त्यागने पर भी वह अपने पति के पास जायेगी? तुम इन्द्र से कह दो कि मैं अपने प्राण तक देने को तैयार हूँ, मगर तारा को छोड़ नहीं सकता।"

प्रभावशाली

वज्रगिरि के राजा का साला नीलांग बड़ा ही घमण्डी था। उसने एक दफ़ा राज पुरोहित के पुत्र को अकारण ही बुरी तरह से पीटा। उस युवक ने नगर के कोत्वाल के पास जाकर अपने घाव दिखाये और फ़रियाद की। यह बात मालूम होने पर नीलांग अपनी बहन के पास पहुँचा और रानी से विनती की कि उसे दण्ड होने से बचावे। रानी ने कोत्वाल के पास जाकर अपने छोटे भाई के प्रति जो फ़रियाद थी, उसे रद्द करने को कहा।

"महारानीजी, आप चाहती हैं तो ज़रूर रद्द करूँगा।" कोत्वाल ने जवाब दिया। इस पर रानी खुश हुई और अपने गले का हार निकालकर कोत्वाल को देने को हुई। तभी पीछे से आकर कोई रानी के हाथ का हार खींचकर भाग गया। रानी ने क्रोध में आकर उस चोर को कठोर दण्ड देने का कोत्वाल को आदेश दिया।

"महारानीजी! वह चोर बड़ा ही प्रभावशाली है।" कोत्वाल ने उत्तर दिया।

यह बात सुनने पर रानी को अपनी भूल मालूम हुई। उसने कोत्वाल से कहा—"कोत्वाल साहब, मेरे छोटे भाई के अपराध पर सुनवाई करके उसे उचित दण्ड दो।" फिर क्या था, उसी वक्त कोत्वाल के बेटे ने आकर रानी का हार वापस लौटा दिया।

कंजूस और बहुरूपिया

गुरुनाथ एक गाँव का बड़ा ही अमीर था, लेकिन पक्का कंजूस था ।

एक बार उस गाँव में एक बहुरूपिया आया । वह सन्यासी का वेष धरकर गुरुनाथ के दर्वाजे पर आया और चिल्ला उठा– "भवती भिक्षां देहि !"

ये शब्द गुरुनाथ को कर्ण कठोर से लगे ! उसने बाहर आकर सन्यासी पर नजर डाली और पूछा–"अबे, तुम्हें क्या हो गया है? भीख माँगने को क्या तुम अंधे हो या लंगड़े ?" ये शब्द कहकर उसने किवाड़ बंद कर लिये ।

दूसरे दिन बहुरूपिया अंधे का वेष धरकर गुरुनाथ के मकान के आगे आया और बोला–"माई, अंधे को थोड़ा दान कर दो ।"

उसे देख गुरुनाथ गुस्से में आया और धुतकारते हुए बोला–"अबे, भीख माँगने के लिए तुम लंगड़े हो या गूंगे हो? जाओ, चले जाओ !"

तीसरे दिन बहुरूपिया गूँगे आदमी का अभिनय करते घंटी बजाते गुरुनाथ की डचोढी पर आ पहुँचा, गुरुनाथ ने उसे देख पूछा–"अबे, तुम्हें क्या हो गया है ?"

बहुरूपिया ने अपने को गूँगा आदमी होने का अभिनय करके दिखाया ।

"ओह, गूँगे आदमी हो? तो भी क्या हुआ? हाथ-पैर तो ठीक हैं? काम-बाम क्यों नहीं करते ?" यों समझाते गुरुनाथ ने किवाड़ बंद कर लिये ।

दूसरे दिन सवेरे गुरुनाथ की पत्नी ने अपने रसोई घर में एक साँप को देखा, वह दौड़कर बाहर आ गई। बाहर चबूतरे पर बैठे अपने पति से बोली– "अजी! घर के अन्दर साँप घुस आया है! साँप है ।"

राजेश वर्मा

गुरुनाथ दौड़कर अन्दर पहुँचा। रसोई में रेंगनेवाले साँप को देख "साँप-साँप" चिल्लाते बाहर दौड़ आया।

अड़ोस-पड़ोस के लोग दौड़कर आ पहुँचे और साँप को मारने का प्रयत्न किये बिना तरह-तरह के सवाल पूछने लगे–"साँप कहाँ पर है? किस जाति का है?. उसका रंग कैसा है!" मगर कोई भी घर के अन्दर नहीं घुसा।

इतने में उधर से एक संपेरा निकल आया। गुरुनाथ की जान में जान आ गई। वह अपने पसीने को पोंछते हुए बोला–"सुनो, हमारे रसोई घर में नाग घुस आया है। उसे पकड़कर हम लोगों को बचाओ!"

"क्या बोले? नाग है! क्या दिखाई दे रहा है?" संपेरे ने पूछा।

"नहीं, अब दिखाई नहीं देता! वह किसी बिल में घुस गया है।" गुरुनाथ ने जवाब दिया।

"तब तो मुश्किल है! कहते हैं कि नाग अगर दुश्मनी मोल लेता है तो बारह वर्ष तक भूलता नहीं! एक ही वार में अगर उसे मार नहीं डाला तो बड़ा खतरा होगा।" संपेरे ने डर दिखाया।

"तुम्हीं अगर यह बात कहते हो तो हम लोगों का क्या हाल होगा?" गुरुनाथ ने समझाया।

सौ रुपये का सौदा ठीक कर संपेरा रसोई घर में गया, नागस्वर फूंका, तब
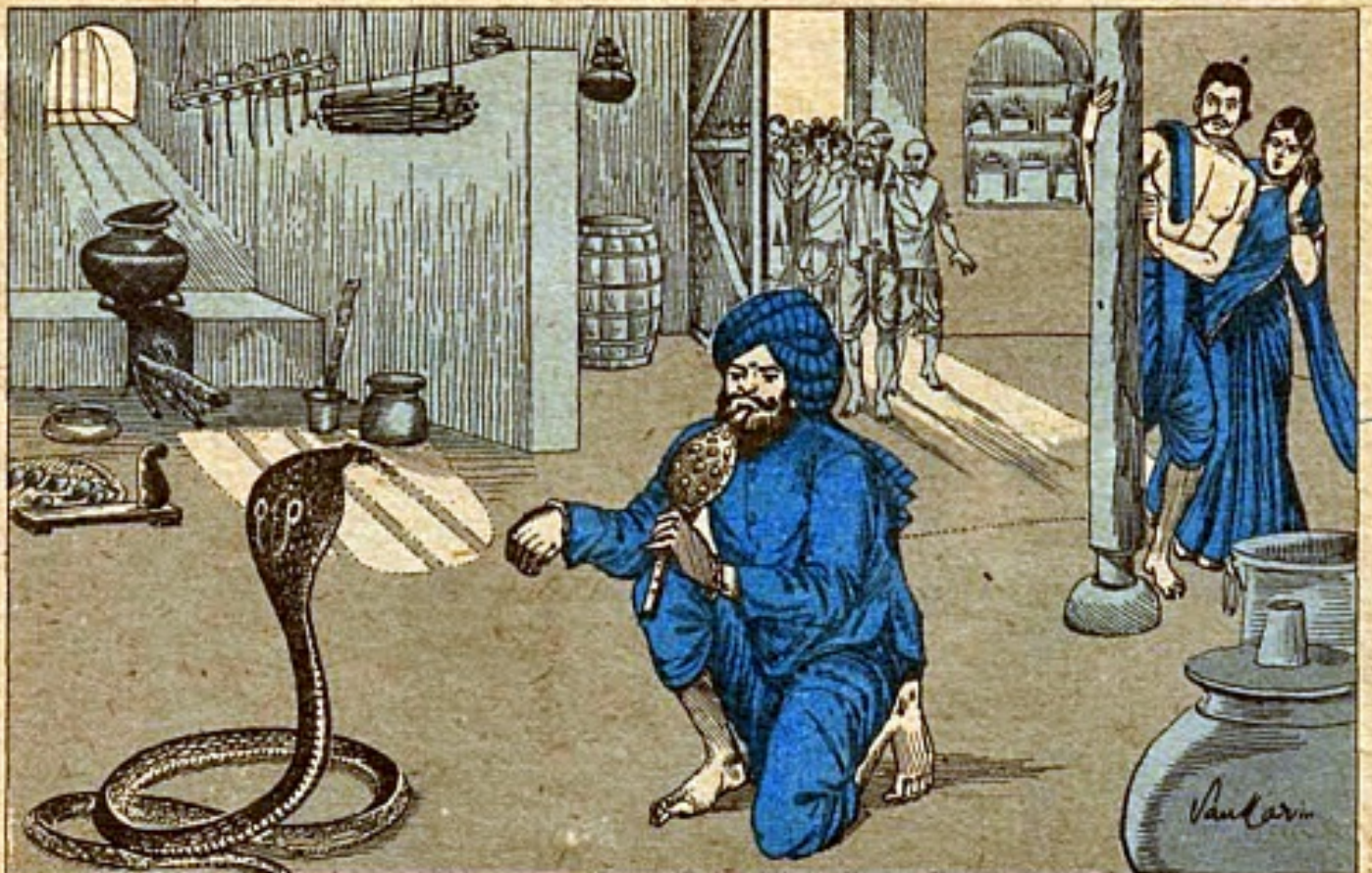
दीवार के छेद में से साँप बाहर निकल आया और फन फैलाकर नाचने लगा। संपेरे ने झट से उसकी गर्दन पकड़कर उसे पिटारी में बंद कर दिया।

गुरुनाथ को लगा कि उसकी जान में जान आ गई है। पर संपेरे को सौ रुपये चुकाते वक़्त उसे लगा कि उसके प्राण सूखते जा रहे हैं। संपेरा सौ रुपये लेकर गुरुनाथ की तारीफ़ करते चला गया।

आखिर दरियाफ़्त करने पर पता चला कि संपेरा और कोई नहीं बल्कि बहुरूपिया है। उसने अपने पालतू साँप को गुरुनाथ के घर में भेज दिया था। इस पर गुरुनाथ का क्रोध उबल पड़ा। उसने गाँव के मुखिये के पास जाकर शिकायत की कि बहुरुपिये ने उसे दगा दिया है, इसलिए उसके रुपये उसे वापस दिलवा दे।

मुखिये ने बहुरुपिये को बुलवा कर डांटा। उसने सारी बातें सच्ची सच्ची बतला कर कहा–"हुजूर! आप ही बताइये, गुरुनाथ जैसे अमीर लोग ही हम जैसे कलाकारों का पोषण नहीं करते तो हमारा क्या हाल होगा?"

मुखिये ने समझाया–"सुनो, तुम अपनी कला का प्रदर्शन करके पुरस्कार प्राप्त कर ले तो हमें कोई आपत्ति न होगी। लेकिन तुमने गुरुनाथ को धोखा दिया है। इसलिए तुम उनके रुपये वापस कर दो।"

बहुरुपिये ने गुरुनाथ को सौ रुपये वापस कर दिये। तब मुखिये ने अपना फ़ैसला सुनाया–"गुरुनाथ जी! जिस पेड़ में फल लदे हैं, लोग उसी पर पत्थर फेंकते हैं! जिसके पास धन है, उसी के आश्रय में निर्धन व्यक्ति जाता है। वह अपनी भूख मिटाने आया है! आप जैसे लोगों का उसे दान देना अपना कर्तव्य हो जाता है। उसे पच्चीस रुपये इनाम दे दीजिए।"

गुरुनाथ ने न केवल संपेरे को पच्चीस रुपये दिये, बल्कि उसने जो सबक़ सिखाया था, उसको आदर्श बनाकर अपनी कंजूसी को भी तिलांजली दी।

सब कोई समान है

धनीराम और जगतराम दोनों पड़ोसी थे। लेकिन धनीराम लखपति था और जगतराम गरीब। धनीराम के पास संपत्ति तो थी, मगर संतान नहीं थी। जगतराम के चार बेटे थे।

जब धनीराम के कोई संतान होने की आशा जाती रही, तब उसके मन में यह ख़्याल आया कि किसी को अपना दत्तक बना ले। उसने निश्चय कर लिया कि जगतराम के चार बेटों में से किसी एक को दत्त पुत्र बना ले।

यह निर्णय धनीराम ने जगतराम को सुनाया। उसने सोचा कि जगतराम बड़ी खुशी से मान लेगा। पर जगतराम ने अपने बेटों में से किसी एक को दत्त देने से इनकार किया।

इस पर धनीराम ने पूछा–"क्या तुम्हारे बेटों में से एक का लखपति बनकर वैभवपूर्ण ज़िंदगी बिताना तुम्हारे लिए पसंद नहीं है?"

"नहीं, क्योंकि मेरे सभी बेटे मेरा रक्त बांटकर पैदा हुए हैं, उनमें से एक लखपति बने और बाक़ी तीन गरीब बने रहें, यह मुझे क़तई पसंद नहीं है। मैं अपनी शक्ति भर इन्हें समान रूप से पाल-पोसकर बड़ा बनाऊँगा। इसके बाद ईश्वर की जैसी इच्छा।" जगतराम ने जवाब दिया।
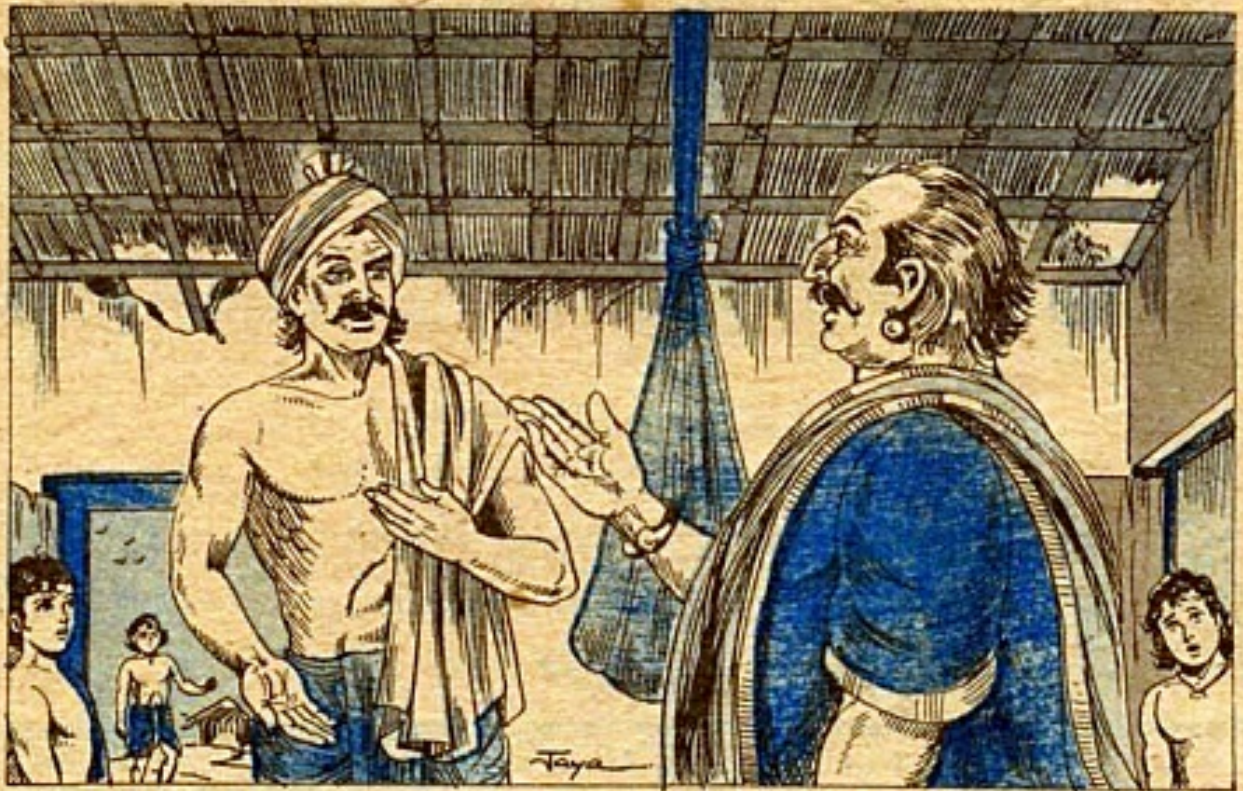
फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ फ़रवरी १९७९ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

Prabhakar Mahadik

★

Devidas Kasbekar

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ दिसंबर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अक्तूबर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : भाई बहन की प्रीति !

द्वितीय फोटो : यह बच्चों की रीति !!

प्रेषक: हरबिन्दर सिंह, S/o तीरथ सिंह, डाकघर सेक्टर-२२ फ़रीदाबाद-१२१००१ (हरि.)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor : NAGI REDDI.

खाली जगह की संख्या बताओ ?

Cadbury's MILK CHOCOLATE GEMS

अपना उत्तर, नाम और पते के साथ केवल अंग्रेजी में और बड़े (ब्लॉक) अक्षरों में लिखो। प्रवेश-पत्र इस पते पर भेजो :

"Fun with Gems"
Dept. E- 9
Post Box No. 56,
Thane 400 601,
Maharashtra.

प्रवेश-पत्र पहुँचने की अंतिम तिथि : 12.1.1979
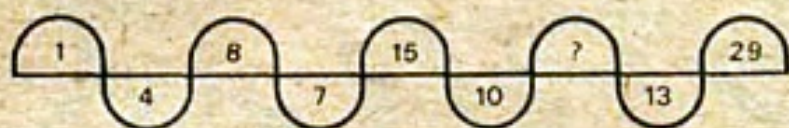
जल्दी करो!

अपना उत्तर, कॅड्बरिज़ जेम्स के एक बड़े खाली प्लास्टिक पैकेट (३० ग्राम) के साथ भेजो। पहले १००१ सफल प्रतियोगियों को ११ रुपये मूल्य का स्टेट बैंक गिफ्ट चेक मिलेगा।

चॉकलेट से भरे रंगीन कॅड्बरिज़ जेम्स

CHAITRA-C-193 HIN

"देखो, मेरी नयी घड़ी
कितनी सुन्दर है !
बताओ तो मुझे कैसे मिली ? जन्म-दिन का उपहार ?
नहीं । गणित में 100 अंक पाने का इनाम ? नहीं ।
इसे तो मैंने यूकोबैंक में जमा अपनी बचत से
खरीदा है । मेरे अच्छे दोस्त, तुम भी यूकोबैंक में
अपना खाता खोल सकते हो । वहाँ खाता खोलना
एकदम आसान है । वहाँ के लोगों का
व्यवहार बहुत अच्छा है—बिलकुल
दोस्त की तरह । और हाँ, वे अपने
ग्राहकों की पूरी-पूरी मदद भी
करते है ।"
यूनाइटेड कमर्शियल बैंक
जनता को सुखी, स्वावलम्बी बनाने में सहायक
UCO/CAS-31 HIN

इतनी अच्छी
कि आप अकेले नहीं खा सकते...

लैक्टोबोनबोन,
माल्टोबोनबोन, डीलक्स
टॉफी, मॉर्टन कुकीज़,
डाइजेस्टिव मिन्ट,
लौलीपॉप एवं सॉफ्ट
-सेन्टर्ड स्वीट्स

**मॉर्टन कन्फैक्शनरी एण्ड मिल्क
प्रॉडक्ट्स फैक्ट्री**

(भूतपूर्व स्वामी :
सी० एण्ड ई० मॉर्टन (इण्डिया) लि०)
प्रो० : अपर गैंजेज शूगर मिल्स लि०
पंजीकृत कार्यालय : ९/१, आर०एन० मुखर्जी
रोड, कलकत्ता ७०० ००१
फैक्ट्री : मारहावड़ा, जिला सरन, बिहार

CC/M—2/78 HIN

बच्चों का स्वास्थ्य, राष्ट्र का भाग्य! – बाल-वर्ष–१९७९